यह साक्षात्कार राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा : 2005 से उठे सवालों के संदर्भ में है। प्रो. यशपाल पाठ्यचर्या की बंधी बंधाई परिभाषा, स्कूल के अन्दर सीखने, को तोड़कर उसे स्कूल के बाहर की जिन्दगी से जोड़ने तथा विषय क्षेत्रों को बंद डिब्बों के रूप में देखने का विरोध करते हुए इनके बीच संबंध जोड़ने की आवश्यकता पर जोर देते हैं । साथ ही बेहतर शिक्षा के लिए शिक्षकों की स्वायत्तता पर बल देते हैं।

प्रो. यशपाल से बातचीत

❑ विश्वंभर एवं मिहिर

प्रश्न : राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा : 2005 से उठी बहस को शिक्षा विमर्श के माध्यम से हिन्दी पाठकों तक ले जाने का हमारा प्रयास है। बहुत-सी पत्र-पत्रिकाओं में इस पर लिखा गया। इस पर एक लम्बी बहस चली है । हमारा पहला सवाल है कि इस राष्ट्रीय पाठ्यचर्या दस्तावेज को बनाने के निर्देशक सिद्धांत क्या रहे हैं और उनको ही चुनने के कारण क्या हैं ?

प्रो. य. : जिन चीजों के बारे में मुझे लग रहा था, लगता है कि जिसमें खामियां हैं और जो हमारे देश के बिल्कुल माफिक नहीं हैं। पहला यह कि सबको मालूम है कि पढ़ाने की बहुत कुछ कोशिश की जाती है लेकिन उसमें समझना बहुत कम होता है। यह तो पुरानी बात है और इसकी बात कई साल पहले की रिपोर्ट में भी की है। मुझे लगता है कि इसे ध्यान से क्रियान्वित नहीं किया गया, क्योंकि अन्दर के लोग भी इसके खिलाफ थे। उनको लग रहा था कि एक आरोपण हो रहा है कि, बाहर वाले लोग आकर उनको कह रहे हैं और इसका बहुत असर देखा गया। जैसे इस साल कितने सारे बच्चों ने आत्महत्या की। और जब इस प्रकार के प्रश्न आते हैं तो लगता है कि हम क्या बेवकूफी कर रहे हैं ! दूसरा यह देखने को मिला कि कितनी ज्यादा कोचिंग क्लास की जरूरत पड़ गई है । अगर शिक्षा ठीक से चले तो कोचिंग क्लास की क्या आवश्यकता है ? यह एक किस्म का बिजनेस बन गया है कि इस तरह के प्रश्न रखो जो लोगों कि समझ में नहीं आएं और जिन बच्चों के माता-पिता बहुत पैसे खर्च कर सकते हैं, उनके लिए ट्रेनिंग करके ट्रिक्स बनाओ ताकि वे पास हो जाएं और आगे एडमिशन ले सकें या अच्छे नम्बर मिलें। यह एक किस्म से शिक्षा के साथ मजाक हो रहा था। बच्चों पर भी जुल्म हो रहा था, बच्चों के माता-पिता पर भी जुल्म हो रहा था। इसके साथ-साथ एक नई चीज आई है जिसका बड़ा फैशन चला है, इसकी वजह से ये मुश्किल और भी बढ़ गई। मीडिया और इन्फॉरमेशन टेक्नोलॉजी बहुत आ गई, कम्प्यूटर आ गया। इसको समझने की जरूरत थी कि अगर कोई जानकारी इतनी जल्दी-जल्दी मिले और बढ़े और हर कहीं से आए तो यह भी समझना जरूरी होगा कि सारी जानकारी अच्छी नहीं होगी। उसमें फालतू भी बहुत होगी, गलत चीजें भी बहुत होंगी। और दूसरा, हो सकता है कि कईयों को लगे कि यह तो बड़ी जानकारी आ गई है, हम लायक बन गए हैं। लोग यह फर्क भी भूल गए थे कि जानकारी और समझने में (ज्ञान में) कितना अन्तर है। और जो जानकारी इस तरह आएगी वो जानकारी कई लोगों को तो मिलेगी और कई को बिल्कुल भी नहीं मिलेगी। कुछ लोग हर तरह से पिछड़ जाएंगे। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005 में हमने इतिहास की ज्यादा बातें नहीं कीं। सामान्यतया यह माना गया कि इतिहास को भी इसी तरह से खोज के निकालने की जरूरत है जैसे विज्ञान में करते हैं । ये कोई नहीं कहता कि यह आपकी मान्यता है इसलिए वो इतिहास बन गया, चाहे वह किसी तरह का भी हो। मान्यताएं अलग चीज होती हैं, उनकी अलग से इज्जत होती है। ये हमें अच्छा लगता है, इसको ऐसा ही होना चाहिए था, वह ऐसा ही था, यह इतिहास नहीं है, मान्यता है। माइथोलॉजी की अपनी जगह है उसको दूसरे तरीके से लेना चाहिए। जैसे ज्योतिषशास्त्र भी है, मुझे कोई इतनी नाराजगी नहीं है जब तक ये कनवेंस मिल रहा है। इसको जब एकदम गंभीरता से लेने लग जाएं तब दिक्कत होती है । फिर एक चीज जो पता नहीं ठीक होगी कि नहीं, बहुत बार कहा तो गया है इस पाठ्यचर्या में, जो पहले कभी नहीं कहा गया कि

बाहर की जिंदगी जिसे बच्चे जीते हैं और स्कूल की पढ़ाई में रिश्ता होना चाहिए। इसकी दो तरह से जरूरत है। एक तो अगर बाहर की जिन्दगी और अन्दर की पढ़ाई का रिश्ता न हो तो शिक्षा सृजनात्मक नहीं होगी। न बाहर की जिन्दगी बदलने के काबिल होगी, न ही बाहर की चीजें सीखने के काबिल होंगी। दूसरा, यह कि अपने देश में देखें तो सब बच्चों के लिए बाहर की जिन्दगी में बहुत सारी चीजें एक जैसी होती हैं लेकिन हर बच्चे के लिए उसकी तस्वीर एक नहीं होती, उसकी तस्वीरें अलग-अलग होती हैं; जबकि बच्चों के अनुभव गांव के हों, पहाड़ के हों, समुद्र के पास रहने वालों के हों। यदि बच्चे के मन में कुछ प्रश्न आते हैं और हम कहें कि आपके पाठ्यक्रम का तो इन प्रश्नों के साथ कोई ताल्लुक नहीं है। ये बड़ी गलत बात है। क्योंकि मेरी तो मान्यता यह भी रही है कि असली पढ़ाई तो खुद सीखने की होती है, यह नहीं कि कोई आपको पढ़ाई दे देता है, आप ले लेते हैं। और उसको अच्छे से वो लेते हैं जो पहले आपके अन्दर है उसके साथ मिला लेते हैं, उससे दोस्ती कर लेते हैं। पाठ्यक्रम में अन्दर और बाहर का रिश्ता बनाने की बहुत जरूरत है, नहीं तो इस तरह की बातें बिल्कुल सैद्धांतिक ही रह जाती हैं। पाठ्यक्रम वगैरह बनते हैं लेकिन खतरा यही रहता है कि हम इसको बाद में भूल जाते हैं। पाठ्यक्रम इस प्रकार से बने कि वह लचीला हो और यदि इसका ताल्लुक इम्तहानों से भी रहेगा तो शायद बहुत गहरा असर पड़ सकता है। ये जो सृजनात्मकता है ये शिक्षा की बहुत जरूरी चीज है। आमतौर पर यह कहा जाता है कि अच्छी-अच्छी पुस्तकें बना दीजिए। उसमें बड़े-बड़े विशेषज्ञ लगा लीजिए और ज्यादातर बाहर देखिए कि क्या-क्या पुस्तकें लगी हुई हैं, बाहर जो पढ़ाते हैं उसे ले लीजिए और शिक्षकों को दे दीजिए और वे इसे बांट (डिलेवर) दें, इसे कहेंगे डिलेवरी एज्यूकेशन। जैसे पोस्टमेन या कूरियर वाले चिट्ठियां बांटते हैं। इसमें शिक्षक की भूमिका एक कूरियर ऐजेंट जैसी बन जाती है। और आजकल तो इस तरह का चल रहा है कि बन गया पाठ्यक्रम और कूरियर वाले गए और बच्चों पर डाल दिया। यह शिक्षकों की बहुत बेइज्जती है। उनको एक निर्जीव इंसान मान लेते हैं। उनको कुछ सोचने की जरूरत नहीं है, बाहर की कोई बात आएगी नहीं, अन्दर की ही रहेगी, जो है उसे पूरा करिए, और इसके बारे में कुछ सोचने की आवश्यकता नहीं है। देखिए बहुत कुछ लिखा गया है, सोचा गया है, फ्रिक हमेशा यह रहती है कि आगे चलेगा कैसे। कम से कम इस बार ठीक से सोचा तो गया। उसमें एक और बात है कि आजकल ये कोशिश कर रहे हैं कि हजारों स्कूल और खोले जाएं। इसके बारे में 'फ्री एण्ड कम्पलसरी एज्यूकेशन' की बात करते हैं। ये बिल पूरी तरह ठीक नहीं है, फिर भी कुछ तो है पहली बार। उम्मीद है बहुत सारे नए स्कूल खोले जाएंगे और बहुत सारे बच्चे जगह-जगह, कोने-कोने से स्कूल में आएंगे जिन्होंने पहले कभी स्कूल नहीं देखा। अब हम चाहें कि सब उसी ढांचे में ढल जाएं जिस ढांचे में आपके आजकल के स्कूल चल रहे हैं तो उनके साथ नाइंसाफी होगी और साथ ही एक बड़ा उम्दा मौका हम खो देंगे क्योंकि इतने ज्यादा स्कूल आएंगे तो इस वक्त मौका है यह सोचने का कि एक समान स्कूली व्यवस्था (कॉमन स्कूल सिस्टम) की बात की जाए। अगर कॉमन स्कूल सिस्टम बन सके जो नये तरीके से, उम्दा तरीके से, लचीले तरीके से चले। जब मैं आशावादी होता हूं और होता हूं आमतौर पर, तो यह आशा रहती है कि कॉमन स्कूल इतने फैल जाएं कि आजकल जो पब्लिक स्कूल हैं ये थोड़े से रह जाएं और कॉमन स्कूल इतने अच्छे बन जाएं की सारे बच्चे वहीं जाएं। न कि अपने घर की सारी आमदनी बर्बाद करके पब्लिक स्कूलों में जाएं। यह हो सकता है, इस पाठ्यचर्या रूपरेखा में ये बातें तो सब हैं, कि ये हो सकना चाहिए। फिर ये जोर दिया गया है कि काम और काम के साथ शिक्षा (वर्क एण्ड एज्यूकेशन) का संबंध बने। यह इसलिए कि काम भी एक शिक्षाशास्त्रीय तरीका है। हाथ से काम करके बच्चे जो सीखते हैं, आप कैसे सिखाएंगे शब्दों में? जैसे कि चलते-चलते पत्ते को मसल के, सूंघ के यह पता लगाते हैं कि यह इस पेड़ के पत्ते की खुशबू है, जैसे कि मेंहदी के पत्ते की खुशबू, यह समझ सिर्फ शब्दों से नहीं आती। यह भी शिक्षा का एक हिस्सा है। दूसरा यह कि आपको कुछ कर सकना आना चाहिए। आप कुछ सीख के आए हों। गांधी जी के हिसाब से बढ़ई के यहां, पर आजकल के हिसाब से किसी के यहां भी, इंडस्ट्रीज में भी या कहीं भी इधर-उधर। तो इससे बाहर की जिन्दगी में जो लोग हैं उनके साथ एक रिश्ता बनेगा और जगह-जगह उनकी मदद से वर्कबेन्चेज बन सकें। वर्कबेन्च में बच्चे काम करें और उसको भी नापना चाहिए। बच्चों की पढ़ाई नापने के लिए उसको भी बीच में मिलाना चाहिए। इसको इम्तहानों में कैसे लाया जाए इसकी भी बात की गई है। और ये व्यावसायिक शिक्षा (वोकेशनल एज्यूकेशन) के हिसाब से अलग है। ये नहीं कि व्यवसाय सीख जाए तो आगे कुछ रोजगार कर लेगा। मैं यह कह रहा हूं कि अगर हाथ से काम करेंगे तो दूसरी शिक्षा है वह भी गहरे तरीके से होगी। अमूर्त चीजें भी गहरे तरीके से समझ आएंगी। कई बार जो अच्छे-अच्छे, नये विचार

भी आते हैं, रिसर्च के भी विचार आते हैं, वे इसी वजह से आते हैं कि आपकी दोस्ती हो गई है दुनिया से। आपने देखना शुरू कर दिया, समझना शुरू कर दिया, ढालना शुरू कर दिया, बदलना शुरू कर दिया। उंगलियों से बहुत कुछ सीख कर आता है इधर (दिमाग की ओर इशारा, मन में)। बाद में परिवर्तन होता है उसका विचारों में। जो उंगलियों से आता है, उसकी भाषा अलग होती है। यदि वह भाषा लाई जा सके अनिवार्यत:। ऐसा नहीं है कि ये चीजें दुनिया भर में नहीं हैं, सारी दुनिया में लोग काम करते हैं इस पर। पता नहीं हमारे यहां कास्ट-सिस्टम या न जाने किस वजह से इसको शिक्षा से बिल्कुल अलग कर दिया गया कि जो स्कूल जाएंगे वे काम करना छोड़ देंगे। ऐसे में यदि आप आईआईटी के इन्जीनियर भी बन जाएंगे तो घर का फ्यूज भी नहीं जोड़ पाएंगे। इसी तरह से मैं कहना चाहूंगा कि हुनर और शिक्षा का रिश्ता होना चाहिए। हमारे देश की खुशकिस्मती यह है, जिसे हमने माना नहीं है, हमारे यहां हुनर वाले बहुत सारे लोग पैदा होते हैं। तरह-तरह के हुनर हैं लोगों में। उसमें हैं आपके कुम्हार, बुनकर आदि-आदि। क्या बुनकर को मालूम नहीं है डिजाइन का, यदि वह लिख नहीं सकता तो क्या बता भी नहीं सकता कि डिजाइन किस रंग के साथ आना है, किधर आना है, कैसे करना है और कौनसा धागा कहां लगाना है ? बहुत गहराई से मालूमात है उनको। उसने खुद सीखा है, अपनी तरफ से सीखा है और यदि उसको स्कूल की शिक्षा से मिलाएंगे तो वह बुनाई भी उस जगह पहुंच जाएगी जहां पहले आपने सोचा नहीं और इंसान को इन क्षेत्रों में आगे बेहतर कार्य करने का मौका मिलेगा। इसी तरह और भी बहुत-सी चीजें हैं जिन्हें शिक्षा से जोड़ना चाहिए। क्राफ्ट्स बहुत सारे हैं, संगीत है, नृत्य है। इनको हम एकस्ट्रा करिक्यूलर (को -करिक्यूलर) कह देते हैं । ये क्यों को-करिक्यूलर हैं ? अगर कोई गहराई से इन क्षेत्रों में काम करना चाहते हैं तो उनकी भी इतनी इज्जत होनी चाहिए जितनी कि कम्प्यूटर साईंस या फिजिक्स की होती है । इसे लाने की कोशिश की गई है इस पाठ्यचर्या में, यह भी काफी कहा गया है, ठीक से कहा गया है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या बनाना, उसको पास कराना बडी मेहनत का काम था, बहुत लोगों ने किया है। लेकिन उसके बाद ठीक से उसको लगाना ये और भी मेहनत का काम है। बहुत से लोगों को लगना पड़ेगा, कोई एक फार्मूला बना कर नहीं बल्कि एक प्रकार की सोच बनाकर । मेरा मतलब है इस तरह से लग जाएं मुहिम बनाकर तब हो सकता है और जब आप करने लगेंगे इस तरह की चीजें तो यह भी देखेंगे कि शिक्षा कैसे ऊंचाई प्राप्त करती है। हमारे देश में जितने अच्छे-अच्छे, बहुत से, शिक्षा में काम हुए हैं, प्रयोग ही नहीं, काफी हद तक पहुंचे हैं, ऐसा बहुत कम देशों में है। लेकिन यह हमारी मुख्यधारा शिक्षा में आता ही नहीं है। आपके दिगन्तर को ही ले लीजिए या एकलव्य या केएसएसपी को लीजिए, कितनी ही संस्था हैं जिन्होंने बहुत गहराई से काम किया है। हम जो बहुत सारी बातें कर रहे हैं उनको बीच में लाया गया है कि बाहर से जुडें और करना भी सीखें, समझना भी सीखें, समाज को भी सिखाएं। इसकी हमारे समाज को बहुत गहरी आवश्यकता है । इस सबसे जुड़ी हुई चीज है जिसे अलग से भी कह सकते हैं और जिसका गहरा फायदा हो सकता है वह यह है कि, यदि हम बाहर की बातें करेंगे तो बाहर के काम में कोई एक अनुशासन (डिसिप्लेन) काम नहीं करता। उसमें बहुत से अनुशासन आ जाते हैं। उसमें साइंस, मेकेनिकल, इलेक्ट्रिक, इलैक्ट्रोनिक, प्लास्टिक की चीजें भी आ जाती हैं और फेब्रिक्स भी आ जाते हैं। उसमें यह भी आ जाता है कि क्यों कर रहे हैं और यह किसी के काम की चीज है कि नहीं अर्थात् मूल्य भी आ जाते हैं । स्कूल में तो विषय पढ़ाए जाते हैं। जिन्दगी से जो समझा जाता है या जिन्दगी से जो महसूस किया जाता है या जिन्दगी से जो सवाल पैदा होते हैं उसे किसी एक विषय विशेष में बांधकर नहीं रख सकते। जिन्दगी एक विषय नहीं है। उसमें मैनेजमेंट भी आ जाता है। हमारी एक मुश्किल यह हो गई है कि हमारी पढ़ाई का अर्थ यह हो गया कि पढ़ाई को आप उन विषयों में बांट लो, आप अपने विषय के विशेषज्ञ हो गए, लेकिन यदि आपके विषय में और दूसरे विषय में एक पोरस छेद की हुई दीवार नहीं होगी तो आप दूसरे से लेंगे नहीं और आप उम्दा काम नहीं कर पाएंगे। टैक्निक्स में भी नहीं कर पाएंगे, टेक्नॉलॉजी में भी नहीं कर पाएंगे। और ऐसा भी नहीं सोच पाएंगे कि किस प्रकार की टेक्निक, टेक्नॉलॉजी बनाई जाए जिसका समाज के साथ रिश्ता हो और जो न केवल बिके बल्कि उसका समाज पर असर पड़े। इस तरह की सोच इस पाठ्यचर्या रूपरेखा में बहुत है । अगर इस प्रकार का होने लगे, बाहर और अन्दर का रिश्ता इस प्रकार का बने तो मुझे लगता है बहुत कीमती चीज इसमें निहित हैं। हमारे समाज में एक समूह है जो ज्ञान को अनुशासनों में बांटकर नहीं देखता। वे हैं बच्चे। बच्चों की उत्सुकता और उनके प्रश्न जितने गहरे होते हैं, जितने गंभीर होते हैं वे इसलिए गहरे और जरूरी होते हैं कि वे विषयों में नहीं बंटे होते। उनको इस विषय विभाजन का ध्यान ही नहीं रहता, यह तो उनकी सामान्य जिज्ञासा है । और यदि इस प्रकार के प्रश्नों

को स्कूल में लाते हैं तो स्कूल आमतौर पर कह देता है कि नहीं, यह स्कूल का प्रश्न ही नहीं है, पाठ्यक्रम में ही नहीं है। क्योंकि अलग-अलग चीजें उसमें आती हैं। कुछ समझ में नहीं आता है कि कौनसा शिक्षक उसको पढ़ाए। बॉयलोजी, फिलॉसोफी, वैल्यूज, भाषा, फिजिक्स या इलेक्ट्रोनिक्स का पढ़ाए। यदि बाहर से जुड़ेंगे तो आपके पास ऐसे प्रश्न आते रहेंगे। ये प्रश्न आएंगे तो अन्दर के अनुशासनों को मिलाने की भी कोशिश करेंगे और जब ये मिलेंगे तब असली रचनात्मक काम होगा। तभी सृजनात्मकता भी आएगी। इन बातों को कुछ हद तक भी शिक्षा में लाया जा सके तो बहुत फायदा होगा। बाकी और चीजें हैं जैसे कि संवैधानिक मूल्य वगैरह। उनके बीच में रहकर पाठ्यचर्या निर्माण का कार्य करना तो निश्चित था ही जैसे लोगों कि विभिन्नता है उसे समझने की जरूरत है। भाषा में विभिन्नता हो, रहने के तरीके में विभिन्नता हो, उसे अलग नहीं करना है। क्योंकि अगर बच्चों से भी और लोगों से भी मिलना चाहते हैं तो उस तरह से चलिए और आगे बढ़िए। इसी प्रकार से भाषा के संदर्भ में भी यह आता है कि छोटे से बच्चे को, जो शायद आजकल गांव में भी शुरू हो गया है, सीधा स्कूल में डाल देते हैं और उसे ए बी सी रटाना शुरू कर देते हैं। ऐसे में बच्चे ने जो भी किया है, सोचा है उसको व्यक्त नहीं कर सकता। वह अपनी भाषा नहीं बोल सकता। उसके दो-तीन साल तो व्यर्थ हो जाते हैं और वे साल इतने गहरे साल होते हैं समझने के, करने के कि उसने जो भी सीखा है वह भी नष्ट हो जाता है। मुझे यह अच्छा लगा है, जो भाषा पर बने फोकस ग्रुप ने भी कहा है कि अगर शुरू से अपनी भाषा में चलते जाएं, बिल्कुल अपनी भाषा से और उसी में समझाया जाए तो यह बच्चे के विकास में मददगार होगा। यदि अंग्रेजी भी पढ़ानी है तो अपनी भाषा से सिखाना शुरू करें और यह आरंभिक वर्षों में दो-तीन साल के बाद प्रारंभ किया जाए। अंग्रेजी पढ़ना कोई बुरी बात नहीं है। सब भाषाएं पढ़ाइए, और बच्चे पढ़ भी सकते हैं। हमें मालूम है कि हम लोग और मेरी उम्र के लोग तो इसी तरह पढ़े हुए हैं। ये समझ लेना कि अगर शुरू से अंग्रेजी नहीं पढ़ाई तो आप मैनेजर नहीं बन सकेंगे या आप लेखक नहीं बन सकेंगे, ये सोचना गलत है। शायद बहुत उम्दा लेखक बनेंगे। शायद अंग्रेजी कभी नहीं पढ़ी होगी तो और भी अच्छे लेखक बनेंगे। कुछ इस प्रकार की खुशबू या बू आती है मुझे इस पाठ्यचर्या रूपरेखा से। मुझे अच्छा यह लगा कि इस पाठ्यचर्या निर्माण में इतने लोग थे। मुझे लगता है कि इस प्रयत्न के बाद कुछ इस तरह की चीज हो सकेंगी। बहुत सारी चीजें जो मेरे मन में थीं कि ऐसा हो सके और वैसी ही चीजें लोगों से भी निकल कर आईं और वैसी चीजें ही बनीं। वक्त बहुत नहीं था इसके लिए, बहुत लोगों ने (सैकडों लोगों ने) काम किया है और काफी प्रेशर में किया है। फिर भी मैं इसको यह मानूंगा कि यह एक किस्म की नई शुरूआत हो सकती है। इसलिए मैंने अपने प्राक्कथन (फोलोज) में कहा था कि शायद शिक्षा की आजादी का एलान किया जा सकता है। बहुत लोग हैं जो रूढ़िवादी हैं, जो आजकल बैठे हुए हैं, ये छोटे-छोटे ऊटपटांग तथाकथित पब्लिक स्कूल वाले और मीडिया वाले। कुछ पब्लिक स्कूल वाले समझते हैं, मेरे यहां रोज किसी न किसी का टेलीफोन आ जाता है कि मैंने इस तरह का प्रोग्राम बनाया है, कम्प्यूटर एज्यूकेशन का। इससे सब पढ़ सकेंगे, सब समझ सकेंगे। मैंने कहा कि मैं क्या करूं इसमें, यह सही है कि मैं कम्प्यूटर पर बता सकता हूं कि लाल रंग कैसा दिखता है और हरा रंग कैसा दिखता है और पीला रंग कैसा दिखता है। बच्चे से भी पूछ सकता हूं कि लाल और वह कम्प्यूटर में देखेगा लाल और सीख जाएगा। मुझे यह बड़ा हैरानी का तरीका लगता है कि लाल रंग सीधा है न प्रकृति में, सभी रंग सीधे हैं तो कम्प्यूटर से सिखाने की क्या आवश्यकता है ? कम्प्यूटर से कई चीजें हो सकती हैं, पर उनके लिए खेल बन गया है कि नर्सरी में भी कम्प्यूटर से उनको रंगों का भेद पता लगे और यह कम्प्यूटर से एक तरह की लत है। देखिए इसकी बेसिक फिलोसफी यह है कि अगर आपकी शिक्षा में आपको थोड़ी सी चीजें भी इतनी गहराई से समझ में आ जाएं कि आपको समझने का चस्का लग जाए। अगर समझने का चस्का लग गया और तब आपके मन में कोई प्रश्न आया कि इसके लिए मुझे और जानकारी की आवश्यकता है, तो आप ढूंढ़िए, उसके लिए कम्प्यूटर बहुत अच्छा साधन है। लेकिन हम चाहते हैं कि सारी जानकारी ले जाएं तो आप सर्फ करते रहेंगे। सर्फ का मतलब है सरफेस के ऊपर गिरते रहेंगे और उसमें ऊटपटांग चीजें भी होंगी तथा उसमें से कोई ज्ञान नहीं निकलेगा। आपकी आदत हो जाएगी कि गहराई में जाओ ही नहीं। लोगों ने बहुत-सी ऊटपंटाग चीजें भी लिखी होती हैं। चलिए जानकारियां गलत हों या सही हों लेकिन जब तक इनके बीच रिश्ते नहीं बनते तब तक वह ज्ञान नहीं बन सकता। और उसका रिश्ता बने जो आपके मन में पहले से है, जिस तरह से आपने पहले सोचा है। लोग समझते हैं कि हम इसके (इन्फॉरमेशन टेक्नॉलॉजी के) खिलाफ हैं। मैं इसके खिलाफ नहीं हूं। बहुत सारे प्रश्न आते हैं मेरे पास जिनके मुझे जवाब नहीं आते। लेकिन प्रश्न आ गया तो उसके लिए जवाब ढूंढ़े जा सकते हैं। कई बार देखा होता है कि जो जुगनू होता है उसमें से लाइट कैसे निकलती है और खाली जुगनू ही नहीं

बहुत सारी छोटी-छोटी चीजें होती हैं जो लाइट निकाल सकती हैं। और यदि आप ढूंढ़ने लग जाते हैं तो आपको जानकारियां मिल जाती हैं। कई बार ऊटपटांग जानकारियां भी होती हैं। मूलत: जवाब यह निकलता है कि क्या कमाल की बात है। एक दो अणु (मौलिक्यूल) हैं, जटिल अणु (काम्पलैक्स मौलिक्यूल), और साथ में ऑक्सीजन मिलती है और एटीपी मिलती है। उससे मिलकर रासायनिक क्रिया होती है और लाइट निकलती है। इससे लाइट निकलने की क्षमता नब्बे प्रतिशत से भी ज्यादा है। ऊर्जा रूपान्तरण, रासायनिक ऊर्जा रूपान्तरण किन्हीं और वस्तुओं से ज्यादा होती है। भई बच्चे को थोड़ा आश्चर्य भी दीजिए। यह समझा करके थोड़ा कि प्रकृति ने क्या-क्या चीजें निकाली हैं। लेकिन इसी सवाल का जवाब इस तरह दो कि एक लूसी क्रेज होता है, एक लूसी फ्रेजर होता है, ऑक्सीजन होता है और उसके साथ मिलकर लाइट बनती है। इससे बात नहीं बनती। मुझे अभी इस सवाल का उत्तर देना है। अभी मैंने इस पर थोड़ा-सा पढ़ा है। अभी जवाब दिया नहीं है। मैं सोच रहा हूं कि इसका जवाब थोड़े अलग तरीके से दूं।

प्रश्न : आपने बहुत सारी बातें कहीं हैं और निश्चित तौर जब शिक्षा का चिन्तन होगा तो उसमें से कई राहें भी निकलेंगी, ऐसा नहीं है कि एकदम से सब कुछ बदल जाएगा, समय लगेगा, लेकिन इस तरफ लोगों का ध्यान जाने लगा है, लोग सोचने लगे हैं। लेकिन जितनी बातें आपने इस दस्तावेज के बारे में अभी कही हैं, एक चीज जो हमें समझ आती है कि शिक्षा व्यवस्था समाज व्यवस्था की उप व्यवस्था है, शिक्षा एक छोटा-सा हिस्सा है पूरे समाज का। हम देख रहे हैं कि समाज एक तरफ बहता हुआ जा रहा है । एक तरफ पूंजीवादी अर्थव्यवस्था है, सब तरफ बाजार आ रहा है। ऐसी स्थिति में लगता है कि शिक्षा हमारे लिए क्या रास्ता सुझा सकती है ? कैसे हम इससे बाहर निकलेंगे ?

प्रो. य. : ये आप ठीक कह रहे हैं कि जो जोर है, ज्यादातर बहाव है, वो तो उल्टी तरफ है। शिक्षा जैसी आजकल चल रही है एक समाज से अलग-थलग चीज नहीं है। इन सबका असर पड़ता है इस पर। लेकिन ऐसी भी शिक्षा बनाई जा सकती है जिसका संपूर्ण व्यवस्था पर असर पड़े। इस तरह की रिर्पोटें निकालकर, चर्चा करके, बातें करके और उसमें से अगर सृजनात्मकता भी निकलने लगे। बात यह है कि हमारे शिक्षित लोग या हमारी शिक्षा प्रणाली चलाने वाले लोग बचाव में हो जाते हैं। वो इसलिए बचाव में हो जाते हैं क्योंकि वे माने हुए है कि आज इतनी शिक्षा तो है, इतने इंजीनियर निकलते हैं, इतने आईटी वाले निकलते हैं। लेकिन ये इतने बडे मुल्क के लिए कुछ भी नहीं है। फिर भी कहते हैं भारत अभी तक क्यों सबसे आगे नहीं चलता। सब चीजें बाहर की ही आती हैं । ये रिकॉर्डर ही लीजिए, ये भारत में क्यों नहीं बना ? किसी ने सोचा क्यों नहीं, क्या बना नहीं सकते, क्या बात है ? अब ये रिकॉर्डर बनाने के लिए केवल एक इलेक्ट्रोनिक्स वाला तो अकेला नहीं बना सकता। इसके लिए तो बहुत मेकेनिकल चीजें चाहिएं। डिजाइन भी चाहिए, और बहुत सारी चीजें चाहिएं और यह तरह-तरह के लोगों को मिलकर करना पड़ेगा। मिलकर करने का यह मौका हम देते ही नहीं हैं अपनी शिक्षा में। इस जगह भी नहीं, टेक्नीकल इंस्टीट्यूट में भी नहीं, रिसर्च लेबोरेट्री और यूनिवर्सिटी के दरम्यान भी नहीं। यह हमारी आदत हो गई है कि अपने-अपने खेमे में रहना और अपने खेमे के अन्दर उसी तरह से इम्तहान लेना, फिर अपने खेमे के अन्दर ही विशेष योग्यता दे देना। अगर खेमे के अन्दर ही नाप तौल के तरीके अच्छे होते हैं तो यह बुरी बात नहीं है। यदि यह सब हम अपने खेमे के अन्दर ही करते रहेंगे बाहर नहीं करेंगे तो इससे कोई उत्पादक चीजें नहीं निकलेंगी। यदि हम मिलकर काम करने की तरफ जाने लगें और नई-नई चीजें निकलने लगें तो यह बहुत फायदेमंद रहेगा। जरूरी नहीं है कि हम आधुनिक जीने के ढंग में हों, सड़क बनाने में हों, कपड़े रंगने के ढंग में हों, आयुर्वेदिक दवाईयां चलाने में हों, डॉक्टरी में हों तो फर्क पड़ सकता है। एक बात यह भी है कि इंसान को एक संसाधन मान लिया जाता है । मानव संसाधन विकास मंत्रालय इंसान को एक संसाधन के तौर पर देखता है जैसे लोहे को, कोयले को माना जाता है। यह मुझे बहुत खराब लगता है। इंसान किसी का संसाधन नहीं है। इंसान को इसांन की तरह बढ़ने की, समझने की, उबरने की, अपनी मानसिक जिन्दगी ऊपर उठाने की जरूरत है। यदि यह होगा तो उसके साथ संसाधन भी बन जाएगा स्वत:ही। हम इंसान को इसलिए पढ़ा रहे हैं कि मशीन की तरह फिट हो जाए, रिसोर्स हो जाए। फिर कहते हैं इनमें मूल्य नहीं हैं, झूठ बोलते हैं, दगाबाजी करते हैं। आप समझते हैं मूल्य अलग चीज हैं। मूल्य अलग चीज नहीं हैं, जिस प्रकार से पढ़ाई होती है, जिस तरह से पढ़ाते हैं, पढ़ाने वाले जो लोग होते हैं, मूल्य उसमें से निचोड़ कर आने चाहिएं, अपने आप। मूल्य पढ़ाने से नहीं सीखे जाते हैं। बहुत आसान है कहना कि सच बोलना चाहिए, धोखा मत दो, लोगों का ध्यान रखना चाहिए। ये कितनी बार कहते जाओगे। ये सब तो स्कूलों की दीवारों पर बहुत लिखा रहता है। मूल्य तो इसमें से निकलते हैं कि हम

किस प्रकार से जीते हैं, किस प्रकार से जिंदगी चलाते हैं, किस प्रकार से एक सवाल से दूसरे सवाल पर आपकी नजर जाती है।

प्रश्न : दस्तावेज में जो कहा गया है और आपने भी कहा है इससे ऐसा लगता है कि समाज में एक आन्दोलन चलाने की जरूरत है। ऐसा नहीं है कि अकेले शिक्षा के माध्यम से ये परिवर्तन आ जाएं। सिर्फ स्कूली व्यवस्था में परिवर्तन कर देने से ही नहीं होगा बल्कि पूरे समाज में वैचारिक बदलाव की आवश्यकता है।

प्रो.य. : देखिए कुछ आंदोलन तो चल रहे हैं। आप भी एक आंदोलन करने वाली संस्था के साथ जुड़े हैं । मैं भी कहीं पढ़ाता नहीं हूं, कहीं टीचर नहीं हूं , कुछ नहीं हूं, हर चीज से बाहर हूं। मेरा दिमाग क्यों इस तरफ लगा हुआ है। यह आन्दोलन ही है। बहुत से लोग हैं करने के लिए, झिंझोड़ने के लिए, कि क्यों ऐसी कमबख्ती में पड़े हो ! कि, पढ़ते जाओ, पढ़ते जाओ और इम्तहान के बाद सब भूल जाना है। इस सबके बाद बच्चे किताबों से घृणा करना शुरू कर देते हैं। उनको किताबों से नाराजगी हो जाती है, जिस तरह से उनपर भार डालते हैं, दिमाग निचोड़ देते हैं। बच्चे किताबों के नजदीक नहीं जाना चाहते, समझना नहीं चाहते हैं, सोचते हैं चलो यार कहीं जाकर मेनेजमेंट कर लेते हैं और तेल साबुन बेचेंगे। लगता है कि ये तो बड़े कमाल की जिन्दगी जीते हैं, कमाल की जिन्दगी नहीं होती, अन्दरूनी दबाव, समस्याएं, मानसिक समस्याएं कई चीजें रहती हैं । ऊपर से ऊपर चढ़ जाते हैं जो नहीं चढ़ पाते हैं उनमें और भी ज्यादा होती हैं और उनको बुरा लगता है कि हम चढ़ नहीं पाए।

प्रश्न : अगर हम थोड़ा-सा सभ्यता के इतिहास को देखें तो लग ऐसा रहा है कि सभ्यता इसी और जा रही है । विकसित कहे जाने वाले पश्चिमी देशों की तरफ देखें तो वहां भी लोगों में इस प्रकार की टेंशन बहुत है, बहुत ज्यादा है।

प्रो.य. : देखिए इस तरह से सोचने वाले लोग पश्चिम में भी बहुत रहे हैं, आज भी हैं । वहां भी बड़े प्रेशर में वो लोग रहते हैं। वहां मुख्यधारा एक तरफ जाना चाहती है , पर हमेशा नहीं। वहां बड़े-बड़े दौर आए हैं, सेवनटीज में आया था, आपको मालूम है जब ह्यूमन सिविल राइटस वगैरह चली थी। कई लोगों को तो हिप्पी कह देते हैं । लेकिन वे बड़े गहरे में सोचते हैं। मैं चंड़ीगढ़ गया था दो दिन पहले। एक इंजनीयरिंग कॉलेज में लेक्चर था। एक बच्चा जो मेरे साथ था उससे काफी बातें हुईं। मैंने कहा, ''रात को पढ़ने को कुछ नहीं है, न टेलीविजन, न रेडियो वगैरह है, कोई खबर नहीं है। कोई किताब है ?'' कहता है, ''हां, मेरे पास कई हैं। एक किताब मेरे पास है, मैंने पढ़ी है पर समझ में नहीं आ रही।'' पुरानी है सेवेन्टीज में आई थी एक किताब 'जेन एण्ड दी आर्ट ऑफ द मोटर साइकिल्स मेंटीनेन्स' आपने देखी है ऐसी किताब। बहुत कमाल की किताब है। उस समय के साथ जुड़ी हुई है, फिलॉसफी में भी जाती है और बहुत सी चीजों में जाती है। बड़ी गहरी किताब है, 'जेन एण्ड दी आर्ट ऑफ द मोटर साइकिल्स मेंटीनेन्स'। यह कि निकल पड़ते हैं मोटर साईकिल पर जा रहे हैं। दुनिया को देखते हैं, संबंधों की बात करते हैं। बात करते-करते फिलॉसफी की बात आती है, आइन्सटाइन की बात आ जाती है। हमको ऐसी चीजें लाने की जरूरत है कि लोगों को इधर लगाया जाए कि सोचें और समाज के साथ लगें।

प्रश्न : इस नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा में मुझे लगता है शिक्षक की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाती है। क्योंकि जो बच्चे का अनुभव है उसको किस तरह से शिक्षा में शामिल किया जाए ? क्या आपको लगता है कि हमारी शिक्षा कभी इतनी सक्षम होगी ? जैसा मेरा अनुभव है कि एक अच्छे पाठ्यक्रम को भी शिक्षक इस तरह से लागू करते हैं कि जिस उद्देश्य से उसको बनाया गया है वह पूरा नहीं हो पाता है ? इस विषय में क्या कहेंगे ?

प्रो. य. : देखिए इस तरह के विषय में आप अलग तरह से भी सोच सकते हैं। आप कह सकते हैं कि शुरू से शिक्षक दूसरी तरह के बनाए जाएं। ठीक है, अब बहुत सारे शिक्षक तो पहले से हैं। दूसरी तरह से कैसे बनेंगे ? शिक्षकों को पढ़ाने वाले भी उसी तरह से पढ़ाते हैं तो फिर सोचिए की क्या किया जा सकता है ? बैंगलोर में एक कांन्फ्रेंस हुई थी। उसका जो मुख्य मुद्दा था 'शिक्षकों की स्वायत्तता एवं जवाबदेही' (ऑटोनोमी एण्ड अकाउंटेबिलिटी ऑफ टीचर्स)। मुझे अजीम प्रेमजी फाउंडेशन ने की नोट के लिए बुला लिया था। मैंने कहा कि आप जब जवाबदेही की बात करते हैं तो मुझे लगता है कि जिस प्रकार की शिक्षा का सपना हम देखते हैं, उसमें जोखिम ली जाए, जोखिम ये है कि टीचर को पूरी तरह से स्वायत्त कर दिया जाए। इसको ऐसे देखा जाना चाहिए कि केवल स्वायत्तता एक किस्म का इनाम नहीं है जिम्मेदार शिक्षकों के लिए, स्वायत्तता एक तरीका है, शिक्षकों को जिम्मेदार बनाने का । अगर स्वायत्तता देंगे तो सब शिक्षक एक सी चीज

नहीं करेंगे और वही तो हम चाहते हैं। अपने तरीके से चलेंगे तो शिक्षकों को भी आनन्द आएगा। कुछ और शिक्षक भी उनके साथ चल देंगे। अगर आप उस तरफ नहीं गए तो आप बातें ही करते रहेंगे कि क्या नियम बनाए जाएं और जो नियम को नापने वाले लोग हैं, वे सब तो बाबू होते हैं। इससे शिक्षा आगे नहीं जाएगी। चलिए, स्वायत्तता की तरफ चलिए। यदि कुछ गलतियां हो जाएंगी तो कोई बात नहीं। जितना आजकल है उससे ज्यादा कुछ नहीं बिगड़ेगा, लेकिन बहुत से लोग और उम्दा कर सकेंगे।

प्रश्न : हमारी शिक्षा व्यवस्था में हम देखते हैं कि दो तरह के लोग हैं एक प्रबंधन के लोग हैं जिनको अकादमिक समझ नहीं होती और जिनको अकादमिक समझ है उनके पास निर्णय लेने की क्षमता नहीं होती। इस द्वैत में कहीं फंसी हुई है हमारी व्यवस्था।

प्रो. य. : ये बड़ी समस्या है। ऐसा नहीं है कि आप स्वायत्त हैं तो आप यह कभी नहीं कह सकते कि मुझे इस तरह के प्रबंधक की आवश्यकता है। आप कह सकते हैं, स्वायत्तता मदद मांगने की भी होनी चाहिए कि दूसरों से मदद चाहिए। अगर शिक्षक को मजा नहीं आता, शिक्षक को समझ में नहीं आता तो वह कह पाए। मेरे भाषण को रिट्राइव कर रहे थे कई लोग, गर्वनर साहब बैठे हुए थे। उनके मुख्यमंत्री, उनके शिक्षा मंत्री भी बैठे थे। अजीम प्रेम जी भी थे। बहुत भरा हुआ हॉल था। मैंने कहा, गर्वनर साहब देखिए आप तो काफी पढ़े-लिखे आदमी हैं। बहुत गहरे आदमी हैं और ये नहीं कि आप दुनिया नहीं घूमे हुए हैं, कहीं गए नहीं या काफी यात्राएं की हैं, सब कुछ किया हुआ है। मैं अगर आपसे पूछूं कि आप बताइए की क्रोशिया की आजकल मुद्रा क्या है तो आप बता पाएंगे ? उन्होंने कहा नहीं, तो मैंने कहा ये सवाल आप पांचवीं क्लास के बच्चे के इम्तहान में क्यों रखते हैं । ये भी कि किरगिस्तान की या फिर छः मुल्कों की राजधानी के नाम बताओ। अब मैं यह भी नहीं कहता हूं कि कहीं ऐसी जगह न हो जहां बच्चा पता करना चाहे तो कर न सके। इसको बच्चों के पाठ्यक्रम में रख दीजिए, लाइब्रेरी में रख दीजिए या किताब में भी हो, पर इनको इंतहान में पूछने की जरूरत नहीं है। बच्चे को इतना तो पता होना चाहिए कि हर मुल्क में अलग-अलग मुद्रा होती है और उसके नाम भी अलग होते हैं और उसके इतने रुपये बनते हैं । ये पता भी लग जाए तो ठीक है, बाद में उसको जरूरत पड़ेगी तो वह देख लेगा। आप भी ऐसा ही करते हैं, मैं भी ऐसा ही करता हूं। मैं चालीस से अधिक मुल्कों में गया हूं, मेरे को भी सभी देशों की मुद्रा याद नहीं है। तो हम ये क्यों चाहते हैं कि बच्चों के ऊपर इस प्रकार की जानकारी लादें कि उसमें आसानी से इम्तहान लिए जा सकते हैं। इसकी कोई जरूरत भी नहीं है और इससे क्या फायदा होगा ?

प्रश्न : शिक्षा प्रबंधन को कम दफ्तरशाही बनाने तथा उसे स्वायत्त बनाने की बात आपने इस दस्तावेज में कही है। जैसे इस संदर्भ में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका की भी बात है।

प्रो. य. : अगर बाहर की जिन्दगी से मिलना है तो इन संस्थानों से मिलना चाहिए और अगर बाहर कुछ असर भी डालना है तो आप बिना मिले असर कैसे डाल सकते हैं...।

प्रश्न : लेकिन इनकी मानसिक तैयारी में यह चीज नजर नहीं आती। यदि हम देखें, चाहे वह स्कूली प्रबंधन के मामले में हो चाहे वे पंचायती राज के संदर्भ में हो, मानसिक तैयारी पूरी तरह से इनको संभालने की नहीं है तो ऐसी स्थिति में क्या तैयारी होनी चाहिए ?

प्रो. य. : देखिए यहां भी मैं वही उत्तर देना चाहूंगा कि अगर कोई जिम्मेदारी इन पर डाल दीजिए कि आपको करना है। कुछ गलतियां करेंगे और कुछ नहीं करेंगे, कुछ सीखते जाएंगे। जितनी गलतियां आजकल होती हैं उससे कम ही होंगी। और क्या तरीका है सीखने का। लोगों को आत्म-निर्भर होना चाहिए। यही तो स्वायत्तता है। यही एक तरीका है। यह नहीं कह सकते हैं कि वे हम सब से खराब इंसान हैं, ऐसा नहीं है। उनको मौका नहीं मिला, अगर करने का मौका मिलेगा और उनसे बात भी की जाए तो हो सकता है वे इन मुद्दों पर बात करें और हो सकता है कि इससे आगे बढ़ें।

प्रश्न : इस पाठ्यचर्या में आपने मातृ भाषा में शिक्षण पर जोर दिया है कि आरंभ में बच्चे के साथ मातृ भाषा में शिक्षण होना चाहिए। यह बात सही है, हमें भी लगता है कि बहुत जरूरी है क्योंकि बच्चा जिस तरीके से बचपन में सीखता है, जिस भाषा में सीखता है उसका उन चीजों से अपना एक लगाव होता है। उन सभी चीजों से एक संवेदनशील रिश्ता बनता है। लेकिन इसमें से यह चीज निकल कर आ रही है, ऐसा हमें लगा, कि स्कूल जिस क्षेत्र में है उस क्षेत्र का ही शिक्षक होना चाहिए। क्योंकि भाषा तो हमारे यहां बहुत जल्दी-जल्दी बदलती है, हर नौ कोस पर । तो क्या शिक्षक भी उसी बोली का चाहिए जिस

बोली में बच्चा बात करता है ? अर्थात् क्या शिक्षकों का चयन उन बोलियों के आधार पर ही होना चाहिए ?

प्रो. य. : देखिए, ऐसा बिल्कुल नहीं है। अध्यापक उसके आस-पास के कहीं के हों। अध्यापक में एक क्षमता होनी चाहिए कि वह बच्चों को पढ़ाने की कोशिश कर रहा है, बच्चे उससे पढ़ें भी । एकाध महीने में वह भाषा सीख जाएगा। यह नहीं कि अध्यापक ऐसा कहे कि मैं बाहर से आया हूं, इसलिए सीखूंगा ही नहीं। ऐसे अध्यापकों का चयन, जो इतना सीखने के लिए तैयार नहीं हैं, वो भी गलत है। यदि वह विदेश से आया हो तो अलग बात है। बाकी ऐसा नहीं है कि सीखा नहीं जा सकता है।

प्रश्न : दस्तावेज में कहा गया है कि बच्चा जब स्कूल में आता है तो बहुत से अनुभव लेकर आता है और उसके अनुभवों को भी शिक्षा में शामिल किया जाना चाहिए, स्थानीय ज्ञान की बात की गई है। स्थानीय ज्ञान के साथ में उसके स्थानीय विश्वास भी आते हैं। बच्चा अपने अनुभवों के साथ कई सारे पूर्वाग्रह भी लाता है, ऐसी मान्यताएं भी लाता है जिसको समाज में रहकर उसने ग्रहण किया है।

प्रो. य. : तो आप क्या सोचते हैं कि उसके मन में जो अंधविश्वास हैं, तो क्या अच्छा यह है कि उसकी बात नहीं करो। उन्हें बच्चे के अन्दर ही रहने दो। अच्छा तो यह होगा कि बच्चा अपने साथ जो अंधविश्वास लाए उस पर स्कूल में चर्चा हो। यदि उन पर चर्चा होगी तो बच्चे पर इसका असर पड़ेगा। ये थोड़े ही है कि बच्चा जो भी अंधविश्वास लाए उन पर बात नहीं करके सिर्फ पाठ्यक्रम की चीजें पढ़ा दो। यह पढ़ाई थोड़े ही हुई। स्कूल तो वह जगह है जहां इस तरह की समस्याओं पर विश्लेषण होना चाहिए। देखना चाहिए कि बच्चे के मन में क्या है ? मैं तो हैरान होता हूं कि इतने बड़े-बड़े लोग इस तरह की बातें करते हैं। मुझे हैरानी होती है कि इन बातों को स्कूल में न लाएं, भले ही यह अंधविश्वास बच्चों के मन में बने रहें, तब ठीक होगा क्या ? अरे खुलने दो उसको, स्कूल में इन पर बात होनी चाहिए और बच्चे की समझ बननी चाहिए। जो यह समझते हैं कि जो बात कह दी गई है वह बात सत्य है, किसी ने भी कह दी। सत्य की बात नहीं है, शिक्षा सत्य के बारे में नहीं है। यदि इनकी बात नहीं हुई तो काम नहीं चलेगा। वह बीमारी है, उसे बीमारी ही रहने दो तो पढ़ जाएगा बच्चा, फैलेगी नहीं। ये किस प्रकार की पढ़ाई है। इस तरह की बातें उभर कर आनी चाहिए ऊपर। कोई आकर कहता है कि, हमारे यहां तो सती होती है, पूजा होती है। ठीक है, अगर इस तरह से आए तो शिक्षक को इन पर बात करनी चाहिए, धीरे-धीरे इनको खोलना चाहिए, क्या यह ठीक है, क्या यह अच्छी बात है, इससे क्या फर्क पड़ता है, क्यों होता है, कैसे होता है ? निकालिए इसको, इससे सतीप्रथा नहीं बढ़ेगी। उसके मन में प्रश्न उत्पन्न होंगे, उसके बाद समझने लगेगा और लोग भी समझने लगेंगे। ऐसी चीजें तो आनी चाहिएं स्कूल में। हैरानी होती है मुझे कि लोग कहते हैं कि ऐसी बात होनी ही नहीं चाहिए।

प्रश्न : एक बात इस तरह की भी कही गई है कि इस दस्तावेज में कहीं भी यह बात नहीं की गई है कि स्कूल में किसी भी तरह के धार्मिक आग्रह लाने की इजाजत नहीं होगी। यानी प्रार्थना वगैरह कुछ नहीं होगा। यही पिछले दस्तावेज के संदर्भ में भी मुद्दे रहे हैं ।

प्रो. य. : देखिए कई चीजों को हम बढ़ा देते हैं, ऐसे ही। यह बिल्कुल ठीक है कि स्कूल किसी धर्म के प्रचार के लिए नहीं है । संवैधानिक मूल्य भी हैं और अगर साथ-साथ आपके मन में यहां तक भी भाव उत्पन्न हो जाए कि शायद भगवान भी नहीं है। इसमें मैं बुराई नहीं समझता हूं। पर आप डंका बजाकर यह कहने जाएं कि भगवान नहीं है, यह भी गलत है। इससे क्या होगा ? एक तो होता है तर्क, एक होती है हमारी मान्यता या संस्कार। मान्यता और संस्कार क्या होते हैं ? घर मे जो सुना, जो देखा है। शादी ब्याह के अवसर पर आप हार डालते हैं, मंगल सूत्र डालते हैं, ठीक है, यह तो सामाजिक मान्यताएं चली आ रही हैं। यदि आप इन सब चीजों से डरने लग गए तो समस्या होती है। लेकिन इसमें भी कोई बुराई नहीं है कि आप दीपावली के दिन पटाखे चलाना चाहते हैं या ईद के दिन कुछ और करना चाहते हैं। इस प्रकार के जहर को निकालने की जरूरत है।

प्रश्न : यह कहा गया है कि स्कूल में प्रार्थना नहीं होगी ऐसा इस दस्तावेज में नहीं कहा गया। जबकि यह धर्म निरपेक्ष राज्य के लिए जरूरी है कि वहां किसी भी तरीके की धार्मिक चीजें न हों, तो क्या ये परंपरा में से प्रगतिशीलता निकालने की कवायद है ?

प्रो. य. : कैसी प्रार्थना है यह, हमारे स्कूल में प्रार्थना हुआ करती थी, 'तुम जगत पिता हो, माता हो, तुम पापियों के परित्राता हो।' यह सब तो चलता है। और यदि कोई यह सोचने लगे कि सारे संसार को आर्य बनाना है। तो यह गलत है।

प्रश्न : इस दस्तावेज के संदर्भ में काफी समस्याएं उठाई गई हैं। प्रगतिशील लोगों की तरफ से भी उठाई गई हैं और दक्षिणपंथी लोगों की तरफ से भी उठाई गई हैं।

प्रो. य. : हां, तो इसका मतलब यह हुआ कि इसमें जरूर कोई ठीक ही बात कही गई है। मैं तो अपने आप को उन्हीं का हिस्सा मानता था, प्रगतिशील वालों का। सहमत में तो मैं इतनी बार जाता हूं। असल में इरफान मेरे पक्के दोस्त हैं। उनको यह घबराहट क्यों होती है कि जमीन से कोई चीज आई तो वह हमें बिगाड़ देगी। एक सज्जन कहते हैं सभी शिक्षक तो रूढ़िवादी हैं। तो मैं क्या करूं यार, क्या उनको निषिद्ध कर दें। निषिद्ध करने से नहीं चलेगा। शिक्षकों को सहभागी बनाना पड़ेगा। इस तरह की अगर पढ़ाई शुरू करेंगे तो वे भी रूढ़िवादी नहीं रहेंगे। आप देखिए कि हमारे यहां स्पेस में जब रॉकेट उठता है, सेटेलाइट वगैरह, तो उनकी प्रथा यह है कि वे पहले नारियल फोड़ते हैं। अब यह नहीं कि वे पूजा करते हैं। एक किस्म की मान्यता है, जो बनी हुई है उनके दिमाग में। अब मैं उनके खिलाफ क्या करूं, यह थोड़े ही है कि वो यह कहते हैं कि नारियल नहीं टूटा तो यह ठीक नहीं होगा। मेरे मन में आता है ये नारियल फोड़ रहे हैं तो फोड़ने दो। रॉकेट तो उड़ ही रहा है ।

प्रश्न : इस तरह के जो छोटे-छोटे विश्वास हैं, कई बार लगता है कि इन्हें नजरअंदाज किए जाने की आवश्यकता है।

प्रो. य. : इस तरह की बातें करने से कुछ नहीं होता। हमें यह समझना चाहिए कि, आप तो यह भी कह सकते हैं कि कोई इंसान किसी बात के लिए अपने माता-पिता और भाई-बहिनों एवं अन्य लोगों के बीच में कोई फर्क नहीं रखे। ठीक है, अगर सरकारी नौकरी देनी है तो कोई फर्क नहीं रखा जाना चाहिए। यहां तक कई लोग पहुंच सकते हैं और अगर आप यह कहें कि जिस प्रकार से मेरे दिल में आता है कि जाके मैं अपनी मां से मिलूं, पिता से मिलूं या भाई से मिलूं। अब यह तो मानव स्वभाव की बात है और इससे बहुत मूल्य निकले हैं। यह नहीं कि दूसरे से कोई दुश्मनी करो। यह शब्द 'अपनत्व' आया कहां से? इस अपनत्व को बढ़ाने की आवश्यकता है न कि जहां कहीं भी ज्यादा अपनत्व देखो तो उसके खिलाफ लड़ाई शुरू कर दो।

प्रश्न : एक यह, ऐसी बात पहले भी कही गई है, कि जैसे ही हम शिक्षा को बालकेन्द्रित करने की बात करते हैं, बच्चे की आवाज को या बच्चे के अनुभव को महत्त्व देने की बात करते हैं तो यह बात करते ही मुझे ऐसा लगता है कि ये व्यवस्था शिक्षक केन्द्रित हो जाती है। क्योंकि शिक्षक को सारे दायित्वों का निर्वाह कक्षा में करना है। वो कितने बेहतर तरीके से उन प्रक्रियाओं को कक्षा-कक्ष में लागू है। बच्चों के अनुभवों को कैसे समेट सकता है। उनको कैसे नये-नये अनुभव देता है। कितने बेहतर तरीके से करता है। ये कहते ही स्कूली व्यवस्था शिक्षक केन्द्रित हो जाती है। लेकिन आज की तारीख में हम देख रहे हैं कि जो बीएड या एसटीसी के कोर्सेज चल रहे हैं, इनकी कोई अच्छी गति नहीं है। तो इनके बारे में आप क्या सोचते हैं कि आगे जाकर इनके बारे में क्या किए जाने की आवश्यकता है ?

प्रो. य. : पहले तो, जिस प्रकार से शिक्षक तैयार किए जाते हैं उस तरीके को बदलने की जरूरत है। उन्हें तो उसी तरह से तैयार करते हैं जैसे तैयार करने वालों को तैयार किया गया था। लेकिन ये इसी से जुड़ा हुआ है कि शिक्षक को जितनी आजादी मिलेगी तो अधिकाधिक शिक्षक ऐसे निकलने लगेंगे जो दूसरी तरह से सोचेंगे। जब भी बच्चा कोई प्रश्न लेकर शिक्षक के पास आता है, तो शिक्षक किस प्रकार से लेगा। बच्चा शिक्षक के पास गया और उसे जवाब नहीं मालूम हो ? तो शिक्षक को यह भी कहना चाहिए कि भई मुझको इसका हल मालूम नहीं है, कैसे करूं ? शिक्षक किसी बच्चे से पूछे तुम क्या सोचते हो ? और किसी दूसरे बच्चे से पूछे तुम कैसे सोचते हो ? समझ में नहीं आ रहा है। अच्छा, मेरे एक बहुत अच्छे दोस्त हैं, मैं उनसे पूछ कर आऊंगा, कि मैं पढ़कर आऊंगा। एक बार आपने ऐसी प्रथा शुरू कर दी कि, बच्चो मुझे भी नहीं मालूम है और बच्चो तुम्हें भी कुछ मालूम है। शायद किसी को भी पता नहीं, कुछ दिनों बाद सब मिलकर खोजें, मैं तो आमतौर पर यह करता हूं। मैं जब जाता हूं, बच्चों के साथ मेरे सवाल-जवाब के सत्र होते हैं। बच्चे तो तरह-तरह के सवाल करते हैं। मैं शुरू में ही कह देता हूं कि देखो, मैं कोई नेता नेटवर्क नहीं हूं कि आपने पूछा और मैंने जवाब दे दिया। मैं यहां सत्य बांटने नहीं आया। मैं तो आपके सामने खुले में अपना सीमित-सही-सोचने का ढंग है वही आपके

सामने रखूंगा। यदि कोई प्रश्न नहीं आया तो हम लोग मिलकर हल करने की कोशिश करेंगे। बच्चों के द्वारा आपस में सुझाव देने से एक रास्ता निकल आता है और फिर किसी से भी कहा जाए कि तुम कल फलां सवाल करके आना। लेकिन शिक्षक को आजकल यह बताया जाता है कि तुम्हें तो सब मालूम होना चाहिए। बच्चे के सामने यह नहीं कहना चाहिए कि मुझे नहीं आता। मैं तो भगवान हूं, यह गलत है। जब शिक्षक यह कहने लगे कि मुझे नहीं आता, बच्चे को भी पता लग जाएगा कि सीखना क्या होता है। हमारे समाज में धार्मिक पुस्तकों के बारे में बनाया हुआ है चाहे कुरान हो या वेद हों या कोई भी धार्मिक पुस्तक हो कि सारा ज्ञान इन पुस्तकों में है। बडा उम्दा कहा है एक जगह कि विज्ञान का आरंभ विशेषज्ञों में विश्वास नहीं करने से होता है। किसी तरह के विशेषज्ञ हों, किसी धर्म के या कोई भी हों। हरेक व्यक्ति की अपनी तरह की सोच हो कि सही क्या है और गलत क्या है ? ये बेइज्जती करने की बात नहीं है।

प्रश्न : इसके लिए किस तरह के व्यवस्थागत बदलावों की आवश्यकता पड़ेगी ? मैं यह शिक्षक-शिक्षा के संदर्भ में कह रहा हूं।

प्रो. य. : शिक्षक शिक्षा (टीचर एज्यूकेशन) के बारे में कुछ कहा तो गया है। मुझे तो यह लगता है कि उन्हें बहुत फंसा देते हैं, पुन: बड़ी चीजों में, उनको रटना पड़ता है कि किस शिक्षा आयोग ने क्या कहा था और कौनसा शिक्षा आयोग कब बैठा था और किस साल में हुई थी और किसने की थी। उन्हें हम अपनी हिस्ट्री बहुत ज्यादा रटाते हैं। उन्हें इनके बारे में थोड़ा बहुत बता दें कि अभी तक कैसे सोचा है लोगों ने। उसके बाद तो ज्यादा ये होना चाहिए कि बच्चों के साथ ज्यादा से ज्यादा अन्त:क्रिया हो, कि बच्चों के साथ काम कैसे करें, क्या नहीं करें ? किस प्रकार से लेसन बनाएं, कैसे समझाएं ? बाल मनोविज्ञान की भी थोड़ी-सी समझ बने और बच्चों के साथ मिलकर काम करने की जरूरत है। अभी के शिक्षक-प्रशिक्षणों में इस पर कम जोर है। अगर इस तरह से होने लगे तो प्रशिक्षण भारी भी नहीं होगा और मुश्किल भी नहीं होगा। असलियत में वही लोग इस व्यवसाय में आएंगे जिनको इसमें बहुत रुचि है ।

प्रश्न : मुझे लगता है कि एक अच्छा शिक्षक बनने के लिए बहुत जरूरी है कि स्वयं की शिक्षा के अनुभवों पर हम पुनर्चिंतन करें, दृष्टिपात करें। कि मेरे साथ क्या किया गया ? कि मुझे कैसा लगा ? कि मैंने कैसे सीखा और यदि नहीं सीखा तो क्यों नहीं सीखा ? ऐसा लगता है कि यह अपने आप में एक तरीका है। इसमें से ये बात भी निकल कर आ रही है कि प्राथमिक शिक्षा में बदलाव तब तक नहीं आ सकता जब तक उच्च शिक्षा में बदलाव नहीं आए। दोनों आपस में जुड़ी हुई हैं ।

प्रो. य. : वो तो ठीक है, उच्च शिक्षा से भी बड़ी आशा है। उसमें भी ये दीवारें बनी हुई हैं, विषयों के बीच में वगैरह, तो इसलिए वह बहुत उत्पादक भी नहीं है। कॉलेजों, विश्वविद्यालयों, विभागों के अन्दर आपस में समन्वयन नहीं है। उद्योगों के साथ नहीं है, कृषि के साथ नहीं है। इनमें समन्वयन की कोशिश करने वालों को हम अलग ही बना देते हैं, झोलेवाला कह देते हैं उनको।

प्रश्न : एनसीईआरटी कोई प्रशासनिक इकाई तो है नहीं । ये तो एक तरह के सुझाव हैं। यदि ये लागू किए जाने हैं, तो ये जो सुझाव हैं इनको स्कूलों में कैसे लागू किया जाएगा ? इसके लिए क्या रणनीति होगी ?

प्रो. य. : मालूम नहीं, आमतौर से, काफी असर डाल सकती है एनसीईआरटी। बाद में इसकी पुस्तकें निकलेंगी। लोग इज्जत तो करते हैं इसकी । पर साथ में इस बार एक अच्छी बात यह हुई है कि, 'हमने कहा था गांगुली साहब से, ये जो जिंदगी है एक बार ही आती है । कुछ करके जाओ इस बार।' तो मुझे लगता है कि पहली बार हुआ है कि कम से कम एक परीक्षा बोर्ड और उसके कर्मचारी भी हमसे कई बार मिले हैं। उन्होंने काफी सकारात्मक दृष्टिकोण दिखाया है इस बार। इम्तहानों के बारे में, ग्रेड्स के बारे में, कुछ कम करने, कुछ काटने में अपनी दिलचस्पी दिखाई है। लेकिन इसके लिए साथ लगना पड़ेगा तब जाकर कोई चीज संभव होगी। ऐसा नहीं है कि विश्वविद्यालयों, कॉलेजों में लोगों को फिक्र नहीं हो रही है। बहुत को हो रही है जल्दी लागू करने की। तो शायद हो सकता है कि कुछ असर पड़ेगा इसका। इस तरह के लोग तैयार होंगे जो ठीक तरह से नाप के उसी तरह के इम्तहान लेंगे। आई आई टी की प्रवेश परीक्षा वगैरह भी हैं उन्हें भी बदलना पड़ेगा। उनको भी कहना पड़ेगा कि भई दो घंटे में नहीं होता है तो चार घंटे में करो, यह नहीं कि जल्दी करो, जल्दी करो। ये सब व्यवस्थाएं वहां पर भी लागू होनी चाहिएं। यह काम अभी खत्म नहीं हुआ है, यह तो सतत प्रक्रिया है। मुश्किल यह है कि इसमें बहुत-सी ताकतें ऐसी हैं जिनका निहित स्वार्थ है कि व्यवस्था ऐसी ही रहे, इसमें कोचिंग क्लासेज वालों की चांदी है। बहुत सारे पब्लिशर्स की चांदी है। बहुत सारे तथाकथित पब्लिक स्कूलों की चांदी है। शुरू

से अंग्रेजी पढ़ाएंगे बक-बक-बक-बक, बच्चों की जिन्दगी खराब करेंगे, टाई लगवा देंगे गरीब बच्चों को, कच्ची बस्ती से निकल रहा है बच्चा टाई लगा कर, तो बहुत सारे निहित स्वार्थ हैं। बहुत-सी मुश्किलें सामने हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि जो करना चाहिए वो आसानी से हो जाएगा या उसे नहीं करना चाहिए ।

प्रश्न : शिक्षा व्यवस्था के संदर्भ में सोचें तो इस पाठ्यचर्या दस्तावेज में जो सुझाव हैं, उनको लागू करने के लिए किस तरह के व्यवस्थागत बदलावों की आवश्यकता है ? हमारी स्कूली व्यवस्था में स्कूल हैं, उससे ऊपर ब्लॉक एवं जिला स्तर पर कार्यालय हैं वहां किस प्रकार के सुधारों की आवश्यकता है ?

प्रो. य. : नहीं, हम तो यहां तक भी कह रहे हैं कि इसमें पंचायती राज संस्थानों को मिलाया जाए। अगर जमीन की समझ भी लाई जाए तो यह साफ हो जाता है कि ऊपर से आदेश लेकर शिक्षक को स्वायत्तता नहीं दी जा सकती। फिर यह जरूरी नहीं रहेगा कि कोई बाबू शिक्षा मंत्री का पत्र लेकर आएगा कि फलां दिन सुबह 11 बजे यह यह पढ़ाना है, नहीं तो तुम्हारी कॉन्फिडेंशल रिर्पोट में लिख दिया जाएगा। इससे तो स्वायतता नहीं आएगी। इन चीजों को भी बदलना पड़ेगा अन्यथा सही मायने में बदलाव नहीं आएगा। देखिए, मुझे लगता है, यह एक किस्म की ऐसी चीज है जिसकी कई जगहों पर ठीक से शुरूआत हो जाए तो इसकी स्नो बॉलिंग हो सकती है। स्नो बॉलिंग भी यह नहीं कि एक दो साल में हो जाएगी। थोड़ा वक्त लगेगा और इसके स्थापित हो जाने की जरूरत है। कई लोग समझते हैं कि हम तकनीक विरोधी हैं। मेरे को तकनीक विरोधी कहना तो गलत बात होगा। पर तकनीक खाली तकनीक नहीं है। कोई तकनीक को चला रहा है अपने तरह से, यदि आप भी उसी तरह से तकनीक का इस्तेमाल करेंगे तब तो आप तकनीक के जरिए किसी के गुलाम हो गए न। और ऐसा किया जाना जरूरी थोड़े ही है। लेनदेन हो इससे, आपस में लेनदेन हो, आप कुछ बात कहें और वहां से तकनीक इस्तेमाल करके मैं कहूं, इसे हिंदी में करें, किसी अन्य भाषा में करें । इसको बहुत अलग तरीके से इस्तेमाल किया जा सकता है और इसको बदला जा सकता है।

प्रश्न : तकनीक को साधन के रूप में लेने की जरूरत है ?

प्रो. य. : साधन का यह है, साधन भी इन्डिविजुअल यूनिट टेक्नोलॉजी लीजिए। यह तो स्वीचिंग है। यहां से स्वीच करके वहां स्टोर किया। वहां से ले लिया। पर उसका सिस्टम आपने किस प्रकार का बनाया है, यह एक तरीका है। उससे असर पड़ता है। ब्रॉडकास्टिंग एक बड़ी अच्छी तकनीक है। और अगर आप यही इस्तेमाल करते रहे कि कोकाकोला पिया और पेप्सी पिया और सिर ऊंचा क्यों करते हैं। कोका कोला पीने के लिए, इतनी बकवास करते हैं। शर्म आती है इतने उम्दा-उम्दा कलाकार, इतने प्रतिभा वाले लोग और बकवास यह कि इस तरह के विज्ञापन करते हैं। इनको शर्म दिलाने के लिए मुहिम होनी चाहिए। अब यह तकनीक तो बहुत अच्छी चीज है और उसमें ऐसी ऊटपटांग चीज डाल देते हैं कोई। आपका बिग बी भी विज्ञापन करता रहता है। अभी ये प्रतिभावान लोग भी सब कुछ बेच रहे हैं। किसी चीज से ताल्लुक नहीं है कि इससे समाज पर क्या असर पड़ेगा। इससे उनका कोई ताल्लुक ही नहीं है ।

प्रश्न : यह भी देखने में आ रहा है कि जैसे ही सत्ता में राजनीतिक पार्टी बदलती है, जैसे पहले बीजेपी थी तब एक तरह का दस्तावेज बना। अब कांग्रेस आ गई है, तब एक तरह का दस्तावेज बना। कांग्रेस ने अपने तरीके से इसकी समीक्षा के लिए .....?

प्रो. य. : किसी कांग्रेस वांग्रेस वाले ने मेरे से बात नहीं की ।

प्रश्न : नहीं, आप से तो बात नहीं की, लेकिन यह एक तरीके से नजर आता है । हम यह सोचते हैं कि क्या कोई ऐसा शिक्षाक्रम नहीं हो सकता जो राजनैतिक पार्टी या विचारधाराओं से हटकर बने ?

प्रो. य. : नहीं, यह तो कभी नहीं होगा। यह समाज में जो होता है वो तो होगा ही। कोई इजाजत देंगे, कोई नहीं देंगे। यह है कि पिछली सरकार ने जब ज्योतिष शास्त्र, कर्मकाण्ड वगैरह डालने की कोशिश की तब यह नहीं कि हम लोग चुप बैठे रहे, विरोध किया, ऐसा नहीं कि हर चीज खराब होती है। उन्होंने यह भी कहा कि बस्ते का बोझ है। ये बात तो वो मान गए, पढ़े हुए लोग हैं सब। पर कुछ खास नहीं हुआ इसके बारे में। लेकिन अपने विश्वासों को वे बच्चे पर बोझ की तरह ही डालते हैं। उनसे पूछा जाए कि यह कहां से आया तो वे कहेंगे कि इस पर विश्वास करो।

प्रश्न : पिछले वाला दस्तावेज जो बीजेपी के समय में बना। पहली बार ऐसा लगा कि कोई चीज आई है और उसका विरोध हो

रहा है। सभी एकजुट हुए। हालांकि उन्होंने भी शब्द वहीं इस्तेमाल किए जो आमतौर पर आज के समय में शिक्षा में प्रचलित शब्दावली है। कुछ चीजें जो ऊपर से देखने में अच्छी लग सकती हैं जैसे बस्ते के बोझ की बात उन्होंने भी की, लेकिन आगे जाकर पाठ्यपुस्तकों वगैरह में उन्होंने जिस तरह से फेरबदल किए, वो आपत्तिजनक हैं। मान लीजिए कि, अगली बार फिर बीजेपी आ जाती है तो सबसे पहले वो इसमें बदलाव की कोशिश करेगी। इसमें कोई अपनी मनमानी नहीं कर पाए, क्या कोई ऐसी व्यवस्था नहीं हो सकती ?

प्रो.य. : देखते हैं कितना चलता है, कितनी मनमानी करेंगे। जहां तक भविष्य का सवाल है, जब आएगा तब देखेंगे। आज भी ये नहीं है कि सब लोग जो करना चाहेंगे, कर पाएंगे इसमें भी बहुत विरोध करने वाले लोग हैं। कई बार तो ऐसा होता है आपको अपने दोस्तों से ज्यादा खतरा होता है ।

प्रश्न : इतने सारे सुधारों की बात कही गई है इसमें। कहीं ऐसा अंदेशा दिखता है कि जो ज्यादा संसाधन संपन्न स्कूल हैं वे इनको ज्यादा अच्छी तरह लागू कर पाएंगे और फायदा कहीं उन तक ही सिमट कर नहीं रह जाए। जैसे विषयों की पढ़ाई में भी यह प्रस्ताव दिया गया कि सामान्य स्तर और उच्च स्तर को अलग-अलग बांटा जाए तो अलग-अलग क्लास करनी पड़ेगी, फिर ...।

प्रो. य. : यदि संपन्न स्कूल इस तरफ जाएंगे तो मुझे बहुत खुशी होगी क्योंकि इनका असर पड़ता है। आम स्कूल उनको कॉपी करने की कोशिश करते हैं। देखिए, सारे पब्लिक स्कूल इतने उम्दा नहीं हैं, न हम उन्हें पब्लिक स्कूल कह सकते हैं, खाली उन्हें नाम दिया गया है। पब्लिक स्कूल में कठिनाई यह है कि वहां असमानता बहुत है, गरीब लोग नहीं आ पाते हैं। यदि कॉमन स्कूल सिस्टम नहीं आता है तो कुछ पब्लिक स्कूल तो रहेंगे। ऐसे पब्लिक स्कूल बहुत से आ गए हैं, बड़े उम्दा-उम्दा नाम हैं उन स्कूलों के, जो कहते हैं कि हम तो स्विटजरलैण्ड में तैयार किया गया कार्यक्रम लागू करेंगे। उन्होंने भी आश्वासन दिया है कि यहां से जो बच्चे पास करेंगे उनको वे इम्तिहान नहीं देने पड़ेंगे जो बाहर की यूनिवर्सिटीज में प्रवेश के लिए देने होते हैं, सीधे ही बाहर यूनिवर्सिटी में ले लिया जाएगा, ऐसे पब्लिक स्कूल भी बहुत सारे आ गए हैं। तो उनसे तो आप आशा नहीं रख सकते, उनका तो हिन्दुस्तान से ताल्लुक नहीं है । वे हिन्दुस्तान से पहले ही पलायन कर गए। और जिनके बच्चे इन स्कूलों में पढ़ने जाते हैं वो भी हिन्दुस्तान से पलायन कर गए, उन्होंने भी छोड़ दिया भारत। यदि भारत से मिलना है तो सब की बात सुनेंगे, सब की जरूरत टाई की जरूरत नहीं होगी। यदि शुरू में अंग्रेजी में गलतियां करेंगे तो माफ करेंगे। मैं जिन भी पब्लिक स्कूलों में जाता हूं, कल भी गया था एक स्कूल में, केवल मैं ही होता हूं जो बच्चों से हिन्दी में बात करता हूं। सबको रटाया हुआ था, अलग-अलग हिस्सों की संस्कृति के बारे में उनको बोलना था। एक छोटा-सा बच्चा था उसने भी अंग्रेजी में रटा हुआ था। हम उसके पास पहुंचे तो उसने बोलना शुरू कर दिया और बीच में एक वाक्य भूल गया। बच्चा कहने लगा कि, अभी ठहरिए। फिर शुरू किया और फिर भूल गया। और अंत में बच्चा रोने लगा। मैंने कहा, 'बेटा, क्या बात है। बताओ क्या कहना चाहते हो।' हिंदी में उनको कोई बात ही नहीं करने देता है। वो समझते हैं कि उनकी प्रतिष्ठा खराब हो जाएगी। स्कूल वाले उन्हें हिन्दी में बोलने ही नहीं देते। इसमें माता-पिता का भी थोड़ा हाथ होता है। मुझे तो कहीं बोलना भी होता है, भाषण भी होता है, क्योंकि वे अपेक्षा भी रखते हैं कि मैं अंग्रेजी में बोलूं। अत: मैं बीच-बीच में अंग्रेजी में बोलता हूं ज्यादातर मैं हिन्दी में ही बात करता हूं। बच्चों को अच्छा भी लगता है और समझ में भी आता है। पंजाब इंजनियरिंग कॉलेज जो कि डीम्ड यूनिवर्सिटी है, परसों शाम को मैं वहां गया था व्याख्यान के लिए। उन्होंने यैरा फिजिक्स और आइन्सटाइन वगैरह के बारे में बोलने के लिए कहा था। मैंने कहा, मैं तो भूल-भाल गया हूं। मेरी उम्र हो गई। अब याद थोड़े ही है फिजिक्स विजिक्स। अब थोड़ा बहुत संपर्क में रहता हूं। फिर भी कहने लगे नहीं नहीं, आप इस तरह भूल थोड़े ही सकते हैं। मैं गया तो उन्होंने पूछा विषय बताइए। मैंने कहा, क्या बताऊं ? उन्होंने कहा आइन्सटाइन के बारे में बताइए। मैंने कहा कर सकता हूं पर प्रोब्लम क्या है ? फिर उन लोगों ने सब्जेक्ट दिया 'फिजिक्स का मजा'।

प्रश्न : मुझे लगता है सवाल वही है कि किस तरह से अन्तर खत्म किया जाए ? जिस तरह से स्कूल में जाने वाले बच्चे हैं और स्कूल के बाहर जो बच्चे हैं। सरकारी स्कूल के बच्चे हैं एवं निजी स्कूल के बच्चों के बीच और जो बच्चे गांव में पढ़ रहे हैं और जो शहर में पढ़ रहे हैं उनके बीच। यह नई पाठ्यचर्या इसमें किस प्रकार योगदान कर पाएगी ?

प्रो. य. : देखिए, मैं समझता हूं इस पर बहुत जोर है। आपके अलावा बहुत से लोग लगे हुए हैं। आपको मालूम है कि बहुत से केस चल रहे हैं। जिन पब्लिक स्कूल वालों को सरकार की ओर से जमीन मिली थी, उन स्कूलों को भी गरीब बच्चों के लिए प्रवेश देना चाहिए। एक कोर्ट ने 50 प्रतिशत भी कहा, 25 प्रतिशत भी कहा। अब स्कूल वालों से बात करते हैं तो वे समझते हैं हम कैसे कर सकते हैं। इसके कई तरीके हो सकते हैं। एक तो कहिए जो फीस दे सकते हैं उनकी फीसें बढ़ाओ और जो फीस नहीं दे सकते उनको प्रवेश दो। यदि ये नहीं करेंगे तो कैसे करेंगे। दूसरा यह हो सकता है कि सही है, यह तरीका एक तरीका है, अगर पब्लिक स्कूलों को रखना चाहते हैं तो अतिरिक्त खर्च जो हो उसे सरकार दे। धीरे-धीरे सरकार उस तरफ जा सकती है जिस तरफ स्कूल जाएं, खासकर अच्छे स्कूलों की तरफ। मैं जिन स्कूलों के साथ काम कर रहा हूं उनको कहता हूं, मैं यह भी समझा रहा हूं कि इसको आप अपने ऊपर आरोपित मत समझिए। यह सोचना ठीक नहीं है कि क्या होगा, बच्चे कैसे सोशियली एडजेस्ट करेंगे, कि वो बुरा महसूस करेंगे। एक चलन शुरू हुआ है हमारे स्कूलों के बीच में भी, कहते हैं कि इन्क्लूसिव ऐज्यूकेशन होनी चाहिए। इसका मतलब है जो विकलांग हैं वे भी आ जाने चाहिएं इसमें। हां यह हो गया है, यह फैशनेवुल हो गया है, ये फैशन चल गया है तो वे तो लेने लग गए हैं। मैंने कहा कि जो बच्चे आते हैं एक तो यह कि आप शुरू से अंग्रेजी मत मारिए, अगर शुरू में मारते ही हैं तो आपको यह समझना पड़ेगा कि आपने जो कुछ भी दिया है उसे यह बच्चा पढ़ सकता है या नहीं। इसकी मां को अंग्रेजी आती है या नहीं, इसके बाप को आती है कि नहीं। हां तो आपको समझना पड़ेगा कि यही हमारा समाज है । आपको या आपके किसी शिक्षक को या आपके किसी विद्यार्थी की ये जिम्मेदारी होगी कि ये सब एक साथ मिलकर करें। अगर इस प्रकार से करने लगेंगे कि बाकी विद्यार्थी को भी पता चलेगा कि हमारा भारत कैसा है और उनसे बहुत सारी चीजें सीखेंगे जो उनको नहीं आती हैं। वर्ग के घेरे टूटेंगे, वर्ग ही नहीं, ज्ञान भी, अपने आस-पास को समझेंगे और सीखेंगे और जो हमारी शिक्षा है वह भी समृद्ध होगी। तो यह भी उनको समझाने की जरूरत है। कई समझने को तैयार हैं, लेकिन सब नहीं हैं।

प्रश्न : और जो बच्चे स्कूल से बाहर हैं ? एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा है जो अभी तक स्कूल के अन्दर है ही नहीं ।

प्रो. य. : उसके लिए तो सर्व शिक्षा अभियान की बात कर रहे हैं, नये स्कूल खोलने की। अगर मुफ्त एवं अनिवार्य शिक्षा (फ्री एण्ड कम्पलसरी एज्यूकेशन) है तो उसके लिए समझाने की जरूरत है। पर कई पब्लिक स्कूल वाले यह भी कहते हैं, कल जिस स्कूल में गया था वह कह रहे थे, कि सरकारी स्कूलों को हमें दे दीजिए और हमें एक भी पैसा और मत दीजिए लेकिन सब शिक्षकों को बदलने की हमें इजाजत दीजिए और हम चलाएंगे इन स्कूलों को। तो बात यह है कि वे प्रबंधन करके, शिक्षकों को बदलकर चला सकते हैं। वे अपनी तरह चलाएंगे और अपने जैसे परिणाम लाएंगे। मुझसे रहा नहीं गया कि तुम्हारे अपने जैसे परिणाम ले आने का मतलब ये नहीं है कि पढ़ाई अच्छी हो रही है। क्योंकि हम तो उनके तरीके से भी इत्तफाक नहीं रखते। सुधार की बात करने पर ऐसा भी जोर लगेगा, बहुत लगेगा, इसमें विरोध भी बहुत होगा क्योंकि ये लोग सत्ता में भी हैं।

प्रश्न : अभी तक हमारी शिक्षा व्यवस्था जिस तरह की रही है इसमें हमारा अनुकूलन कुछ इस प्रकार का हो गया है कि हम भी वही देखना या करना चाहते हैं जैसी हमारी शिक्षा हुई है। हमारी सबसे बड़ी समस्या यह भी है इसको लागू करने में।

प्रो. य. : समझाने की जरूरत है लोगों को, घबराने की जरूरत नहीं है। हमें ये समझना होगा कि हिंदुस्तान के सब लोगों की इज्जत करना आना चाहिए। नीचे पहुंच कर आप देखेंगे कि जिसे आप नीचे समझते हैं, वे इतने नीचे भी नहीं हैं, कि उनको साथ लेकर नहीं चला जा सकता। और यह भी समझना होगा कि अगर हम भारत देश की परवाह करना चाहते हैं तो देश के सारे फ्यूचर जीनियस तो वहां छुपे पड़े हैं। इतने थोड़े लोग आते हैं, 9 प्रतिशत बच्चे 12 वीं क्लास तक जाते हैं। तो अगर सब आने लगें तब जाकर यह भारत 100 करोड़ का माना जाएगा। आजकल तो 10 करोड़ के बराबर है।

प्रश्न : एक चीज यह कही जा रही है कि इस दस्तावेज को बनाते हुए पिछले जो अनुभव रहे हैं उनका या शिक्षा नीतियों की गहराई से समीक्षा नहीं की गई है।

प्रो. य. : देखिए जो नीतियों की बात करते हैं, यह बात सबको मालूम है कि कुछ भी काम अभी तक ठीक से नहीं किया गया। यह नहीं कि 2000 की नीति ने नहीं किया। 95 की नीति ने भी नहीं किया। 90 की ने भी नहीं किया। 86 की ने भी नहीं किया। तो क्या आप झगड़ते रहें, तो क्या आपस में लड़ाई ही कराते रहें। दिस इज नाट ए जजमेंट केस, समस्याएं

तो सबको मालूम हैं ही, समस्याएं तो सबको स्पष्ट हैं। कभी-कभी यह कहा जाता है कि, गांधी जी ने यह कहा था, टैगोर ने यह कहा था। यह सब तो ठीक है। मैंने कहा, जी मालूम है यह कहा था गांधीजी ने, पर ऐसी ही कई चीजें हैं कि यदि गांधी जी न कहते तो भी मैं आज ये देखकर कह सकता था कि ऐसा होना चाहिए था। अच्छा है गांधी ने कहा है, लेकिन काम का शिक्षा के साथ संबंध शिक्षा का प्रथम सिद्धांत है। विषयों के बीच की दीवारें पोरस होनी चाहिएं, यह भी प्रथम सिद्धान्त है। जो भी काम हुआ है जो मैंने किया है या किसी ने भी किया है सब इसी तरह हुआ है। इसके लिए हम हमेशा वेद वाक्य ढूंढ़ते रहते हैं ।

प्रश्न : आपने जो शिक्षा और काम के संबंध की बात कही है, यह सही है लेकिन मैं एक मित्र से बात कर रहा था उन्होंने कहा, 'काम की जरूरत तो शहरी और अभिजात वर्ग के बच्चों को है। गांव के बच्चे तो पहले से ही बहुत काम करते रहते हैं ।

प्रो. य. : तो शिक्षा में उसकी इज्जत क्यों नहीं करते? उसको भी काम माना जाना चाहिए। कौन कहता है कि शहरी काम केवल काम है। भेड़ बकरियां चराते हैं तो वह भी एक काम है, यदि आप के घर का कुआं खुद रहा है, मकान ठीक हो रहा है, वह कर रहे हैं तो वह भी काम है। इस काम को शिक्षा के साथ मिलाया जाना चाहिए। बच्चे जिस प्रकार से अपना मकान खड़ा करने में मदद करते हैं, असम में जाकर देखिए, तो वह भी शिक्षा है। यदि वह वहां की शिक्षा के साथ मिलेगा तो कितनी गहराई आ जाएगी उनके काम में भी और शिक्षा में भी।

प्रश्न : कहीं इसमें ऐसा तो नहीं होगा कि उनके काम को इज्जत देने के नाम पर बच्चा या व्यक्ति जो काम कर रहा है वह आगे भी वही काम करता रहे, यही व्यवस्था बनी रहे, टूटे नहीं, कहीं यह संभावना तो नहीं होगी ?

प्रो. य. : आप स्कूल में आ रहे हैं, पढ़ रहे हैं और उस काम से सीखते हैं और उस काम में ऐसी चीजें जोड़ने की कोशिश करते हैं तो व्यक्ति उस क्षेत्र में भी तो आगे जा सकता है। यदि वह फल उगाता है और वह यह जान ले कि फल कैसे उगाए जाएं, उनकी देखभाल कैसे की जाए ? यह सीखने में कोई बुराई नहीं है। केवल यह नहीं है कि वह फल उगाता रहे। यदि वह चाहे तो वनस्पति विज्ञानी बन सकता है, जीव विज्ञानी बन सकता है। जो लोग कुछ नहीं करते क्या आप समझते हैं वे अच्छी हालत में हैं ? कहीं से भी सीखा हुआ कहीं और इस्तेमाल हो सकता है। यह नहीं है कि वहीं इस्तेमाल हो सकता है। हाथ से काम करने की जो चीज है वह आप कहीं भी इस्तेमाल कर सकते हैं। आप अच्छे इंजीनियर बन सकते हैं, उम्दा काम के। आप नई किस्म की मोटरें इजाद कर सकते हैं, कई और तरह की चीजें भी कर सकते हैं। और यदि आप नये अविष्कारों के इतिहास को देखें या तकनीक के इतिहास को देखें तो ये सारी खोजें इसी प्रकार से हुई हैं। जो लोग हाथ से काम करते थे, ठोककर बनाते थे, उन्होंने हवाई जहाज बनाया और बहुत-सी चीजें खोजीं, बनाईं। और वे महान अविष्कारक बन गए।

प्रश्न : मेरा अंदेशा यही था कि वो जो काम कर रहा है कहीं उसी में न फंसा रह जाए कि उसी को और अच्छी तरह से करो लेकिन कुछ और मत करो।

प्रो. य. : देखिए वो ठीक शिक्षा नहीं है। इसका मतलब यह भी हो गया कि जो किया जा सकता है उसे भी मत करो। ये तो गलत है ।

प्रश्न : यदि हम शिक्षा व्यवस्था पर गौर करें तो हमें एक तरफ तो यह नजर आता है कि निजी स्कूलों और सरकारी स्कूलों में बड़ा अन्तर है। साथ ही ग्रामीण और शहरी सरकारी स्कूलों में भी बहुत बड़ा फर्क है ? ग्रामीण स्कूलों में बच्चे पांचवीं कक्षा तक पढ़ना लिखना भी नहीं सीखते ? इस खाई को कैसे पाटा जाएगा ?

प्रो. य. : पढ़ाने का तरीका कैसे है ? पहले कैसे सीख जाते थे? गांव के स्कूलों में बहुत सारे पढ़े हुए हैं और वहीं सीख जाते थे, आजकल क्यों नहीं सीखते हैं ?

प्रश्न : हां ये तो सही सवाल है ? लेकिन यह एक सवालिया निशान तो है ही।

प्रो. य. : देखिए एक तो यह है कि शिक्षक को इस प्रकार का मनोव्यक्ति बना देते हैं कि वो भी समझता है मुझे तो यही करना है जो कर रहा हूं, बस यही करना है। इस तरह का भविष्य उनके दिमाग में बैठ जाता है। यदि खेती भी करनी है तो मैं इधर-

उधर से सीख लेता हूं, लेकिन यह उसकी जरूरत नहीं बनती। केवल यही करना है और उसी तरीके से करना है, तब उनमें कोई उत्साह नहीं रहता। मुझे कई बार टेलीविजन वाले कहते हैं कि गांव वालों के लिए, आम लोगों के लिए कोई कार्यक्रम बनाइए, खेतों पर बनाइए। अरे ! क्या गांव के बच्चों को जानने की उत्सुकता नहीं है कि आसमान में तारे कैसे होते हैं ? सौर मण्डल क्या होता है ? क्यों बनाइए उनके लिए सिर्फ खेती पर कार्यक्रम ? मेरे पास जब टर्निंग प्वाइंट के प्रश्न आते थे, पोस्टकार्ड में आते थे, तब इन्टरनेट वगैरह नहीं था, गांव-गांव से, छोटे-छोटे शहरों से आते थे। वे प्रश्न सबसे सुन्दर होते थे। उनके प्रश्न आते थे कि कोई आदमी मर जाता है तो उसको उठाना बड़ा कठिन होता है। क्या वह मरने के बाद भारी हो जाता है ? और एक सवाल था कि कोई व्यक्ति डूब के मरता है, तो एक या दो दिन के बाद दुर्गन्ध आने लगती है एवं उसकी लाश तैरने लगती है। वो तैरने क्यों लगती है ? ये बहुत ही अच्छे प्रश्न हैं ? लोग पूछते हुए ही घबराते हैं। अब ये सवाल तो शहर और गांव दोनों के संदर्भ में ही हैं। अच्छा, पहले सवाल का जवाब दो उसे उठाना क्यों मुश्किल होता है ? भार बढ़ जाता है क्या, एकदम से ? आत्मा निकल गई तो क्या आत्मा ने ऊपर उठाया हुआ था ?

प्रश्न : क्या वास्तव में वजन बढ़ जाता है ?

प्रो. य. : नहीं बढ़ता है, बात यह होती है कि किसी भी जीवित आदमी को उठाने लगो तो वह यह करता है कि आप के गले में हाथ डाल देता है और टांगें यहां (कमर में) बांध देता है। और यदि आप मरे हुए आदमी को उठाने लगो तो वह सारा भार आपके हाथ पर आता है, इसलिए आसानी से नहीं उठा सकते। भार नहीं बढ़ता है। जीवित आदमी आपके साथ सहयोग करता है और मरा हुआ सहयोग नहीं करता है। और दूसरे सवाल का जवाब यह है कि एकदम से शरीर डिके होना शुरू हो जाता है और बास आती है और डिके होने का मतलब यह है कि अन्दर बैक्टीरिया काम करते हैं और उससे बहुत सारी गैस बनती है। सारे शरीर में गैस भर जाती है। इस कारण शरीर हल्का हो जाता है और तैरने लगता है। बात यह है कि इन प्रश्नों पर मैंने भी सोचा नहीं था। बच्चों के प्रश्न आते हैं तो सोचना पड़ता है।

प्रश्न : कई ऐसे प्रश्न हैं जो बच्चों के दिमाग में ही आते हैं।

प्रो. य. : हां, बच्चों के ही दिमाग में आते हैं, तो बच्चों को तो रिर्सोस मानना चाहिए, कि बच्चों से सीखें कि उन्हें क्या पढ़ाना चाहिए ? मेरे साथ कोई काम करने को तैयार हो, मेरे में तो इतनी हिम्मत नहीं रही, अब तक मैंने तीन-चार, टर्निंग पांइट के तो पता नहीं मिलें या न मिलें वो भी मिल जाएं शायद, इसके बाद इंटरनेट पर मैंने डेढ दो साल काम किया। दूसरे प्रश्नों के उत्तर हैं, उसकी शायद अभी एक किताब तैयार हो जाएगी। उसके बाद मैंने मलायम मनोरमा वालों के साथ एक दो साल काम किया था और ट्रिब्यून के साथ चल रहा है एक डेढ साल से। तीन-तीन सौ पेजों की किताबें हैं और उसमें हजार डेढ हजार प्रश्नों के उत्तर हैं। हर चीज के गुरूत्वाकर्षण के, उपग्रह के, चांद के गिर्द कभी-कभी एक रंग क्यों दिखता है ? कभी -कभी हम देखते हैं कि चांद के ऊपर एक गोल चक्कर बना हुआ होता है, वह बहुत चमक रहा होता है। खासकर जब थोड़े से बादल होते हैं। बच्चों के प्रश्न ऐसे होते हैं कि सवाल में से सवाल निकल सकते हैं। देखिए, क्या-क्या सवाल निकलते हैं इसमें से। पहला तो ये कि ये जो बादल, हल्के-हल्के से बादल होते हैं बहुत ऊंचाई पर और ज्यादातर बादल ऐसे होते हैं वहां पर बर्फ की क्रिस्टल होती हैं, बादलों में। सवाल आया क्रिस्टल बर्फ क्या होती है ? बर्फ की क्रिस्टल होती है उसमें 6 साइड पेंसिल की तरह की रॉड्स होती हैं। बहुत प्लेट्स होती हैं छः साइडेड। आप कहेंगे कि यह कैसे मालूम हुआ तो आप कह सकते हैं कि अंदाज है, और यह भी कह सकते हैं कि माइक्रोस्कोप से देखो। अगर ऐसी क्रिस्टल बनी, मैं बात कर रहा हूं नवीं-दसवीं कक्षा के बच्चों की, जिन्होंने हैरेइज्म वगैरह देखा है, शायद उस उस क्रिस्टल के विकल्प न हों। तो इधर से लाइट आएगी अन्दर बेंड होगी दूसरे से निकलेगी, बेंड हो जाएगी तो उसमें से बेंड हो गई। तो फिर एक चीज आती है समझने की जो कॉलेज वाले भी नहीं समझे होते हैं, तुमने कभी विज्ञान पढा है ?

प्रश्न : मैं कला का विद्यार्थी रहा हूं। हां, दसवीं तक पढ़ा था।

प्रो. य. : दसवीं तक पढ़ा, तो इसमें, प्रिज्म में, ये होता है कि लाइट इस तरफ से गई अन्दर निकली फिर इधर मुड़ गई। जिस तरफ से किरण आ रही है और जिस तरफ निकली है और यदि उसका एंगल लिया जाए, उसको कहते हैं डिविएशन। इसमें यह होता है कि बीच में प्रिज्म को घुमाते जाएं तो लाइट अलग-अलग एंगल पर आएगी। तो एक एंगल ऐसा होगा जिसे एंगल ऑफ मिनिमम डिविएशन कहते हैं। उसको घुमाओगे तो कम से कम इतना फर्क पड़ेगा एंगल पर। इसका मतलब

है कि अगर जो लाइट गई इस एंगल के अन्दर तो आई ही नहीं सकती बाहर, तो सीधा हल यह निकला कि क्रिस्टल कैसे भी हों, ऐसे हों, ऐसे हों, हवा में तैरना ही है, उस एंगल के अन्दर तो कुछ आएगा ही नहीं। उस एंगल के अन्दर नहीं आया अन्दर खाली खाली होगा। बाहर लाइट चली जाएगी। और बाहर इसमें यह होता है एंगल आप मिनिमम डिविएशन करके देखो तो बड़ा सारा प्रिज्म घुमा लो तो वहीं पे लाइट जाती है। जो एंगल है उसके पास बहुत जाती है कुछ बाहर चली जाती है। तो इसलिए सर्किल बन जाता है। अब इसमें से इसको आप करिए इस प्रश्न को लेकर आप कहिए कि ऑपटिक्स पढ़ाना है मुझे, मैं इससे पढ़ाऊंगा कि लाइट कैसे बैण्ड होती है? प्रिज्म में से कैसे होता है ? आप एक नये प्रश्न में से सब चीजें निकालिए। बात शुरू कीजिए। हमने खाली चांद और इसकी बात की है। फिर आप कह सकते हैं यह इंद्रधनुष कैसे बनता है ? वो तो बर्फ की बात नहीं है। वो तो पानी के छोटे-छोटे टुकड़े और बूंदें होती हैं। इधर से पीछे से लाइट आती है सूरज की शाम के समय और उधर इन्द्रधनुष होता है। तो उसमें भी तकरीबन ऐसा ही है लाइट पानी की बूंद के अन्दर जाती है, पर वो ऐसे एंगल पर जाती है कि पिछली साइड से रिफ्लेक्ट हो जाती है। वह क्यों होती है ? उसको कहेंगे एंगल ऑफ इंटरनल टोटल रिफ्लेक्शन । कि जितनी भी लाइट इस एंगल से जाएगी वह सारी रिफ्लेक्ट हो जाएगी। तो एक और सवाल आ गया सीखने का, सो उधर से निकलती है तो फिर बिखरती है, इतने बड़े रंग होते हैं, रंग बिखर जाते हैं वो बिखरते हैं लाल से लेकर सारे रंग बिखरते हैं। ये लाइट भी वहीं आती है इसमें भी एक एंगल मिनिमम डिविएशन है। उसी तरह जैसे प्रिज्म में काम कर रहा है। वह एंगल होता है 22 डिग्री का, 22 डिग्री के एंगल में कुछ नहीं होगा। सारी लाइट बाहर जाएगी। ये एंगल होता है 42 डिग्री का। उससे कम हो ही नहीं सकता। क्योंकि एक बार रिफ्लेक्ट हो कर फिर रिफ्लेक्ट होगी। तो दो बार हुई अन्दर से। ये 42 डिग्री होती है तो ये जो इन्द्रधनुष होता है ये इस लंगर के 42 डिग्री के एंगल बनाइए वहीं पर होता है। बहुत से प्रश्न होते हैं बच्चों के कि इन्द्रधनुष गोल क्यों होता है ? आधा गोल क्यों होता है ? ये तिकोना क्यों नहीं होता है ? अब एक-दो प्रश्न लेकर आप सारा ऑप्टिक्स पढ़ा सकते हैं । निकलते जाइए आप, इसी प्रकार का पढ़ाने का कार्यक्रम बनाइए, अच्छे से ऑप्टीक्स में वक्त लगाइए कैसे बैण्ड होती है, लाइट्स के कितने रंग हैं, क्यों हैं ? खाली बोलकर नहीं प्रयोग करके भी। ये कर सकते हैं, फिर आप और कर सकते हैं कि वहां क्रिस्टल होती क्यों हैं, ऊपर, ठंडा क्यों होता है, ऊपर जाते हैं तो ठंडा क्यों होता है ? तो उसमें तो इतना पूरा पाठ्यक्रम निकलता है। फिर, बरसात कैसे होती है ? एक प्रश्न यह आता है कि बरसात तो बूंद-बूंद गिरती है। अगर जोर की भी आती है तो भी बूंद बूंद गिरती है पानी का नल कि तरह क्यों नहीं खुल जाती ? ये सभी प्रश्न बहुत ही अच्छे प्रश्न हैं और प्रत्येक प्रश्न में बहुत समझ छिपी हुई है, उसमें एंकर हो जाती है। एंकर में ही कहते हैं हम बाद में सवाल का जवाब दिया है यह काम करने का है इनको लेकर आगे एंकर करेंगे तो जितना औपचारिक पाठ्यक्रम है वह निकाला जा सकता है।

प्रश्न : इसमें से कहीं न कहीं यह बात निकल रही है कि इस तरह की पाठ्यपुस्तक बनाई जाएं जो सवाल पूछना सिखाती हों? इस तरह के प्रयास हुए भी हैं ।

प्रो. य. : इसलिए तो तुम लोगों से कह रहा हूं। वे सब (पाठ्यपुस्तक निर्माता) घबराए हुए हैं, सब लोग हर कहीं कहते हैं कि पाठ्यपुस्तकों का मतलब है कि जमीन से चलो, पहले आप बेस बनाओ, नींव बनाओ, नींव पर चीजों को खड़ा करो, वो नींव इतनी बोरिंग लगती है बच्चों को कि बहुत सारे बच्चे तो बीच में ही छोड़ देते हैं। ऐसी कोशिश की जानी चाहिए कि यदि बच्चों के प्रश्न वहां से आ रहे हैं तो आप मानो कि आप ऊपर से रोशनदान से आकर नींव तक पहुंच सकते हो। रूप बदलना है। ये भगवान ने थोड़े ही कहा है कि पहले ए सिखाओ और बाद में बी सिखाओ। बच्चे को इस तरह नींव पर लेकर आएंगे तो बड़ी पक्की नींव बनेगी।

प्रश्न : मुझे याद है बचपन में इस तरह की किताबें हुआ करती थीं, खेल-खेल में ज्यामिती, खेल-खेल में बॉटनी, तो उसमें इस तरह के सवालों से सिखाया जाता था। सोवियत संघ के प्रकाशन की। उसमें कई इस प्रकार के प्रश्न होते थे कि नजानू ने देखा कि उसके आस पास न जाने कितनी सरल रेखाएं हैं, न जाने कितनी वक्र रेखाएं हैं। आप भी अपने आस-पास देखिए, ढूंढ़ के इकट्ठा कीजिए कितनी सरल रेखाएं हैं ।

प्रश्न : इस दस्तावेज पर अभी बड़ी बहस चल रही है। एक पुस्तिका भी निकली है। हमें लग रहा था कि, कम से कम मेरी ये राय है, कुछ चीजें जो इसके बारे में उठाई गई हैं वो सही संदर्भ में नहीं उठाई गई हैं । इसकी वजह क्या है कि जो प्रगतिशील

लोग हैं वे इस तरीके के सवाल खड़ा कर रहे हैं। जैसे स्थानीय ज्ञान का ही सवाल है। कोई भी जो शिक्षा में काम करता है वो यह तो समझता है कि हम स्कूल में जब इन चीजों को ला रहें हैं या लाने की बात कर रहे हैं तो उनको मानने के लिए नहीं ला रहे हैं, उन पर संवाद के लिए ला रहे हैं। उन पर चर्चा हो इसलिए ला रहे हैं ।

प्रो. य. : बिल्कुल, क्योंकि अभी तक उन पर भी यही असर है कि, ज्ञान या तो भगवान से मिल सकता है या किसी ग्रेट मार्क्स से मिल सकता है। जहां तक मार्क्स की बात है तो मैं स्वयं उनका बहुत सम्मान करता हूं। लेकिन यह कहना तो ठीक नहीं है कि केवल उन्हीं से ज्ञान मिल सकता है और उस पर प्रश्न नहीं किया जा सकता। या ज्ञान तो किसी पूंजीवादी अर्थशास्त्री से मिल सकता है। सब समझने की बात है, किसी तरह से समझिए।

प्रश्न : इस दस्तावेज के संदर्भ में एक चीज यह भी कही जा रही है कि ये सारी बातें, अच्छी-अच्छी, पहले भी हो चुकी हैं।

प्रो. य. : इसका मतलब यही है कि बस हमारी तो यही नियति है, हमारा भविष्य यही है, नीचे सड़ना और कुछ न करना।

प्रश्न : इससे लगता है कि इस बार जिस तरीके का संवाद इसको लेकर हो रहा है वह सकारात्मक है।

प्रो. य. : अच्छा है बातें होनी चाहिएं। इस प्रकार की, जैसा आप कह रहे हैं, तर्क-वितर्क भी होने चाहिएं, यह इसी से चलेगा। यहां पर ज्ञान का कोई भी निरपेक्ष स्रोत नहीं है। अगर आप वो करेंगे तो आप किसी कट्टरपंथी की तरह बन जाएंगे।

प्रश्न : इस दस्तावेज के संदर्भ में कहा गया है कि बच्चों के लिए ज्ञान निर्माण का जो संरचनावादी तरीका लिया गया है वही अपने आप में उपयुक्त तरीका नहीं है ।

प्रो. य. : क्यों नहीं है ?

प्रश्न : कहा गया है कि इंसानी समाज ने अपने इतिहास में बहुत-सा ज्ञान तो संरचित कर लिया है फिर अब बच्चा पहिए का अविष्कार करे ये कौनसी मतलब की बात है ?

प्रो. य. : देखिए हम गलत चीज को मान रहे हैं। हम बच्चे को पहिए का अविष्कार करने को नहीं कह रहे हैं । हम यह कह रहे हैं कि बच्चे ने पहिया देखा है, तो यह जरूरी है कि वह पहिया बनाएगा तो गोल ही बनाएगा लेकिन यदि वह हाथ से बनाएगा तो उसे मालूम होगा कि यह कैसे बना होगा । ये मेरी समझ में नहीं आता कि ऐसे सवाल क्यों उठाए जाते हैं। यदि बच्चा हाथ से करेगा तो ज्यादा गहराई से सीखेगा। मुझे तो लगता है कि सब अविष्कार हुए ही ऐसे हैं। थोड़ा अनुभव किया, थोड़ा अवलोकन किया, थोडा बनाया, थोडा कुछ किया, उससे लगा कि अरे यार ऐसे बनाओ तो ठीक रहेगा। मुझे याद है कि हम बचपन में किया करते थे। वो एक स्लोपिंग सीढी होती है, छोटी-सी। नीचे से ऊपर जाने के लिए। तो उसके साइड में पैरापैक बना होता है बहुत ज्यादा नहीं, हल्की सी होती थी, तो उसपे एक मोटी सी तार रख के और तार का हैंडल बना लेना और उसके ऊपर एक लकड़ी का पट्टा रख देना। फिर एक बच्चे को वहां खड़ा करना, तो उसको ऊपर चढ़ा सकते थे या नीचे उतार सकते थे। आपको मालूम है ये सब करते थे। यहां एक गति को दूसरी गति में बदलना है और ये चीजें हमेशा आप बाद में भी करते हैं। आप साइंस करें, रिसर्च करें, कुछ करें, वो चीजें जो आपके अनुभव में हैं वो बीच में आती हैं । और उसी को इस्तेमाल करते हैं आप दूसरे तरीके से। ज्ञान सिर्फ शब्द मात्र नहीं है। ज्ञान के एक किस्म के रिश्ते बने होते हैं, दिमाग में और उन चीजों के साथ जो आपने देखी हैं, समझने की कोशिश की है, बनाई हैं। उनके साथ संघर्ष चलता रहता है और नई चीज आती है। संघर्ष जब कम होने लगे तो आप कहते हैं समझ आ गया, संरचना उसे कहते हैं। मैंने कहा भई हरेक बच्चे के द्वारा ज्ञान का निर्माण भिन्न तरीके से होता है। इस तरह से मैं सोचता हूं और मेरे दिमाग में इकॉलिजी है नॉलेज की। आप के दिमाग में अलग होगा। और किसी और के अलग होगा। और हरेक तरीका सही होता है, कोई बिल्कुल गलत नहीं माना जा सकता है। ◆